जो महाशय पुस्तक मंगावे वे अपना ठिकाना पत्ता हिन्दी और अंग्रेजी दोनों अक्षरों में-गाम के नाम पोस्ट ऑफिस और जिल्ला साफ साफ हर्फों में लिखे, साफ हर्फों में पत्र न होने से वांचने में नहीं आता जिससे पुस्तक भेजणेको लाचार है।

और पत्र के साथ बुकपोस्ट खर्चाके लिये टिकिट पहिला भेजें, मगर इतना अवश्य ख्याल रखें कि कोई भी आधा शेर वजन से ज्यादे की टीकीट नहीं भेजें। जो किताब स्टाक में होगी वे भेजी जायगी यदि पहिले किसी को पूछना हो तो जवाबी पोस्टकार्ड लिखकर जवाब मंगा लेवे। वी० पी० से किताब नहीं भेजी जाती।

अगरचन्द भैरोदान सेठिया
"जैन ग्रन्थालय"
बीकानेर (राजपूताना) *J. B. R.*

सेठिया जैनग्रन्थालय पुस्तक नं० ११

श्रीवीतरागाय नमः

श्रीशील रत्नसार संग्रह

संग्रहकर्त्ता—

भैरोंदान जेठमल सेठिया

बीकानेर निवासी

Bhairodan Jethmull Sethia

MOHOLLA MAROTIAN.

Bikaner, Rajputana, J. B. Ry.

कलकत्ता

२०१ हरिसन रोड के "नरसिंह प्रेस" में

मैनेजर—पण्डित काशीनाथ जैन,

द्वारा मुद्रित।

द्वितीयावृत्ति
प्रति ५०००
मूल्य शीलपालन

वीर सं० २४४९
विक्रम सं० १९[illegible]
सन् १९२३

* श्रीगौतमाय नमः *

सूचना

यह पुस्तक यत्न से रक्खे, जयणा से बांचे टुटी भाषामें अशुद्ध लिख्यो हुयो सज्जन कृपाकर सुधार लेवें और गुणग्राही बनें, यही संग्रहकर्त्ता को नम्र विनती है।

अनुक्रमणिका

श्री शील रत्न सार संग्रह

मंगलाचरण

अर्हंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय
सर्व साधुभ्यो नमः ।

दोहा

अरिहन्ता अरिहन्तजी, सिद्ध ऋद्धि दातार ।
आचारज उवझाय मुनि-राज वशे उरधार ॥

अथ नववाड़ ब्रह्मचर्य्यकी लिख्यते

दोहा।

प्रणमु पंच परमेसरूं, सिद्ध समरूं भगवंत।
वलि प्रणमुं भावे करी, चोवीसी अनंत ॥ १ ॥
समोसरथा श्री वीरजी, राजग्रही सुविशेष।
बारे परषदा आगले, इण पर दै उपदेश ॥ २ ॥
जग मांहे सहु कोय छे, तप जप क्रिया आचार।
शीलव्रत गुण तेहना, कहता न आवे पार ॥३॥
नव वाड कही शीलनी, राखीजे गुणवंत।
तेहनी सुर सानिध करे, जगमें जश पावंत ॥४॥

हिवे नव वाड़ जुदी जुदी, भाखी श्री भगवंत ।
सुंणतां हिवड़ो उल्लसे, आराध्यां सुख अनंत ।५।

ढाल पहेली ।

हाथी तो आकाशे चलीयो, विद्याधर विद्या-बलीयो ए देशी ॥ पेहिली वाड़ज स्वामी, कांइ इम भाषे अन्तरजामी हो भविकजन ॥ शील सदा सुखकारी ॥ १ ॥ शील रतन व्रतधारी, जिणने चिहुं (च्यारूं) गति पार नीवारी हो भ० । शील० ॥ २ ॥ थानक निरमल नीरखी, कांइ, तिहां रहीया मन हरखी हो भ० । शील० ॥ ३ ॥ नारी प्रसंग निवारो, कांइ, सफल करो अवतारो हो भ० शील० ॥ ४ ॥ चित्रामणकी नारी, कांइ, तिहां रह्यां उपजे विकारी हो भ० । शील० ॥ ५ ॥ नारी तणो तिहां वासो, कांइ, तिहां रह्या हुवे जगमें हासो हो भ० । शील० ॥ ६ ॥ मूसक ऊपर मंजारी, कांइ, जिम त्रियाने

ब्रह्मचारी हो भ० । शील० ॥ ७ ॥ सुवट पींजर में रहीये, कांइ, देख बिलाड़ीसु बीये (डरीये) हो भ० । शील० ॥ ८ ॥ दादुर जलमें रहिये, कांइ, विषहर दुखने बीहे हो भ० । शील० ॥ ९ ॥ इण दृष्टान्ते ब्रह्मचारी, कांइ, वस्तीमें रहिये विचारी हो भ० । शील० ॥ १० ॥ पहिली वाड़ इम राखे, कांइ, इम वीर ज़िनेश्वर भाखे हो भ० । शील० ॥ ११ ॥ अगरचन्द इम भाषे, हिवे, बीजी वाड़ प्रकाशे हो भ० । शील० ।१२।

दोहा ।

हिवे श्री वीर जिणंदजी, भाषे बीजी वाड़ ।
आराध्यां संकट टले, मेटे मननी राड़ ॥ १ ॥

ढाल दूजी ।

वाभाजीरे कार वागल गाउं ॥ ए देशी ॥
बीजी वाड़ जिनेश्वर भाषे । इम वारे परखदा

साखे रे। धन धन साधु वैरागी ॥१॥ नारी इके-लीसुं वात न करीये । तिणसेती निश्चय डरिये रे । धन० ॥ २ ॥ धर्म कथा न कहे तिण आगे । जिण दिठां मन मद जागेरे । धन० ॥ ३ ॥ कोई नर नारी दृष्टी आवे तो, आंगुलीयां दिखलावेरे । धन० ॥ ४ ॥ दोषी दुर्जनके निजरां आवे । तो शील कलंक चढ़ावेरे । धन० ॥ ५ ॥ वनिता (स्त्रीना) वचने रति-पति खोभे, इम संजम नहीं सोभेरे । धन० ॥ ६ ॥ पात झड़े पवन प्रसंगे । तो शील तणो व्रत भंगेरे । धन० ॥ ७ ॥ मनमें जाणे हूं शीले साचो । पिण जग सहु मांने काचोरे । धन० ॥८॥ नींबू दूर थकी जे निरखी । ए तो रसना स्वाद लै परखीरे । धन० ॥ ९ ॥ दीपक देख पतं-ग्यो झंपे । तिम नारीसुं ब्रह्मचारी कंपे रे । धन० ॥१०॥ इण दृष्टान्ते थे ब्रह्मचारी । थे तो वस्तीमें रहिज्यो वीचारीरे । धन० ॥११॥ बीजी वाड़ इण पर राखे । अगरचन्द मुनि भाषे रे । धन०॥१२॥

दोहा।
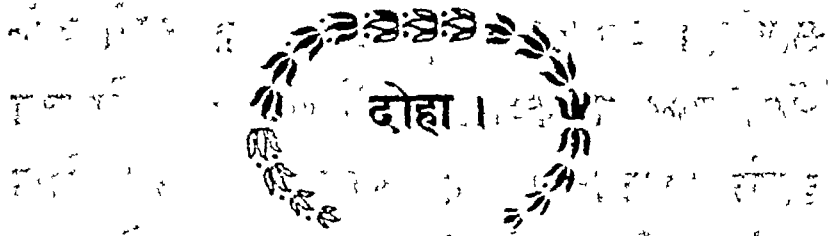
सिद्धारथ कुलचन्दजी, समोसरण मझार।
इण पर दे उपदेशना, तीजी वाड़ उचार॥ १॥

ढाल तीजी

ढोलाजी रेणरो कांइ जाय॥ ए देशी॥
तीजी वाड़ सुहामणी हो, श्रीजिन, भाषे वीर-जिणंद। मन वचन काया आदरे हो, श्रीजिन, जिण घर हर्ष आणंद, श्रीजिन, सांभलजो सहु कोय॥ १॥ सांभलतां सुख उपजे हो, श्रीजिन, आराध्यां शिव सुख होय, श्रीजिन, सांभलज्यो० ॥ २॥ आसन छोड़ो नारीनों हो, श्रीजिन, राखो शीलरत्न। सर्व व्रतांमें शिर सेहरो हो, श्रीजिन, करीये एहना जतन, श्री जिन, सांभलज्यो० ॥ ३॥ सिज्यादिकने पाटले

हो, श्रीजिन, जिहां तिहां बेसे नार। मुहूर्त्त एक तिहां लगे हो, श्रीजिन, नहीं बेसे ब्रह्मचार, श्रीजिन, सां० ॥४॥ पुत्री षट वर्षा तणी हो, श्रीजिन, ते पिण सेज्यारे मांय। इम जाणी सेवे नहीं हो, श्रीजिन, नारीनो आसन ताम, श्रीजिन, सां० ॥५॥ आसन सेव्यां नारनो हो श्रीजिन, भाजो शील अखंड। कवड़ी सटे नहीं बेचीये हो, श्रीजिन, गुण मणी रत्न करंड, श्रीजिन, सां० ॥६॥ आसण फरस्यां एवड़ो हो, श्रीजिन, बोले दोष भगवंत। ते काया फरसे जे नरा हो, श्रीजिन, चिहुं गत मांहि भमंत, श्री जिन, सां० ॥ ७ ॥ तिणथी आसन छोडदो हो, श्रीजिन, जो राखो तुम शील। कर्म कटक सहु भांजसो हो, श्रीजिन, लेसो अनुक्रमे लील, श्रीजिन, सां० ॥ ८ ॥ रमणी केरे बेसणो हो, श्रीजिन, नहीं बेसे गुणवंत। बिगड़े ब्रह्मचर्य मोटको हो, श्रीजिन, दुधमें लूणनो दृष्टान्त, श्रीजिन, सां० ॥९॥ स्फटिक रत्न जिम निर्मलो

हो, श्रीजिन, नहीं फरसे जसु रंग । नीर न फरसे कमोदनी हो, श्रीजिन, तिम राखो व्रत सुरङ्ग, श्रीजिन, सां० ॥१०॥ इण दृष्टान्ते राखीये हो, श्रीजिन, तीजी वाड़ अखंड । अगरचन्द कहे तेहने हो, श्रीजिन, ते बलवंत प्रचंड, श्रीजिन, सां० ॥ ११ ॥

दोहा ।

श्रीवर्द्धमान जिनवर, सुख संपत दातार ।
चौथी वाड़ इम उच्चरे, समोसरण मझार ॥१॥

ढाल चौथी ।

तट सरवरनो रे घणो रलीयामणो ॥ ए देशी ॥ चौथी वाड़रे श्रीवीर जिणन्दजी, भाखे भलो उपदेश । शील सुरंगो रे राचो रंगसुं, पामो सुगति विशेष । धन धन जे नर ओ व्रत आदरे, ज्यां घर हर्ष आणंद ॥ धन० ॥ १

कामण केरा रे काम कटकने, मत जोइजो रे कोय । भंड कुचेष्टा रे निरखत खिण, भांजे शील अमोल ॥ धन० ॥ २ ॥ चिहु गत रूपी रे कूप जगतमें, रमणी विषय विकार । रत्न अमोलक भाजे तेहथी, निरख्यां मेंप दीदार । धन० ॥३॥ कामण केरा शास्त्र विनोद्रा, नहीं वांचीजे ब्रह्मचार । शीलरत्नरा रे जो तुमे लालची विषिया विषय निवार । धन० ॥४॥ जिम कोई पंथीरे चाल्यो मारगे, मिलियो तसकर आय । धन कंचणरे मूल गमायने, पंथी निर्धन थाय । धन० ॥५॥ जिम ब्रह्मचारी रे शिवपुर पंथीयो, भरीयो शील तणो धन माल । कामण रूपी रे तसकर आय मिल्यो, दीयो शील लुंटाय । धन० ॥६॥ जिम कोइ अंधक वैद्य वचन करी, दिनकर (सूर्य्य) सामो मती जोय । पडल तणो दुख भांजसी, लोचन निर्मल होय । धन० ॥ ७ ॥ वैद्य प्रकासे हो दिनकर रेणीयो, फिर सांमो मती जोय । बचन न मान्यो

जोइयो, ततखिण अंधक होय । धन० ॥ ८ ॥
नारी केरा रूप विचक्षणा, मति निरखों तुम
जोय । ते रूप अंधकनी परे, इण पर होसी रे
सोय । धन० ॥९॥ नारी धूतारीरे इण संसारमें;
नारी कपटनी खाण । रूप सिणगाररे हो सामो
मत जोयज्यो, इम भाखे वर्द्धमान । धन०॥१०॥
रमणी रूपे हो जागे मोहणी; राचे विषय
विकार । हाथमें दीवोरे कूप मांहे पडे, इम झंपे
मुढ गिंवार । धन० ॥११॥ इण दृष्टान्ते हो तिण
नहीं राचीये, कामण केरे सरूप । अगरचन्द
इम विनवे हो, चोथी वाड़ अनूप । धन० ॥१२॥

दोहा ।

सुगुण साधु शिरोमणी, जगपति जोगी सरूप ।
भाखे परखदा आगले, पांचमी वाड़ अनूप ॥

ढाल पांचमी

जेवो सुख मुझने दियो तुमे, दो निज

बाप कंवरजी। एदेशी॥ चोमुख सिंहासन थयो,चमर ढोले चोसठ इन्द, सोभागी। भामंडल पुठे भलो, बेठा वीरजिणंद, सोभागी, सुन्दर व्रत चोथो कह्यो॥ ए टेर॥१॥ पांचमी वाड़ जिनेसरु,इम भाखे बचन रसाल,सोभागी। अमृत वाणी उच्चरे, गुंथे भविक लोक गुण-माल, सो० सुं०॥२॥ कामण केरा गीतने, नहीं सुणे चित्त लगाय,सो०। नारी मिले बहु एकठी, नहीं निरखे कौतक जाय, सो० सुं०॥३॥ हसे रमे क्रीडा करे, गावे गालने गीत, सो० तिहां न वसे ब्रह्मचारिजी, ब्रह्मचारीनी आइ छे रीत, सो० सुं० ॥४॥ रुदन करे हांसी करे, बोले नेहादिकना बोल, सो० शीलवंत नहीं सांभले, तिहां चंचल हुवे मन, सो० सु०॥५॥ नहीं सुणे नारी तणा, रूड़ा रिम झिम नेवर नाद, सो० सुणता ततखिण उपजे, बहु मदन तणो उदमाद, सो० सुं॥६॥ नर नारी रजनी समे, बोले नेहादिकना वचन, सो०। शीलवंत नहीं

सांभले, तिहां चंचल होवे मन, सो० सुं ॥७॥
दुरजन खेले पेचमें,पेली बोले मधुरा वेण सो०।
अन्तर कपट हिये वसे,पछे घाले बंधन पेच,सो०
सुं० ॥ ८ ॥ मेह तणो गरज न सुणे, बहु मोर
करे टहुकार, सो०। ललित वचन नारी तणा,
कांइ सुणतां उपजे विकार सो० सुं० ॥९॥ वीणा
शब्द कानां सुणे, मृग आवे तिण वन, सो०।
बंधन करे पारधि, तिम नारी केरा वचन सो०
सुं० ॥१०॥ लाखने मेंण जावे गली, अग्नि केरे
परसंग, सो०। सराग वचन सुंदर तणा, करे
शील रत्ननो भंग, सो० सुं० ॥११॥ इण दृष्टान्ते
राखीये, पंचमी वाड़ अमोल, सो० अगरचन्द
मन रंगसुं इम जंपे रूड़ा बोल,सो० सुं० ॥१२॥

दोहा।

त्रिलोक शिर सेहरो, चोवीसमा जिणचंद।
छट्ठी वाड़ इम उच्चरे, भविक यथा आणंद ॥१॥

ढाल छट्ठी ।

पदमणी बोले वीरा वादलारे ॥ ए देशी ॥ छट्ठी वाड़ शिरोमणीरे, गुणमणी रयण विशेष हो । सिद्धारथ तसु सुन्दरूजी, इणपर दे उपदेश हो । वीर जिणंद इम उच्चरेजी, बारे परखदा मझार हो ॥ १ ॥ ए टेर ॥ पूरव भोग नहीं चिन्तवेजी, चिन्तवीयां दुख थाय हो । शील रत्नका लाल-चीजी, विकथा न आणो मन माय हो । वी० ॥ २॥ क्या मुझ सुखनी सुन्दरीजी, क्या मुज सखरी सेज हो । क्या मंदिर क्या मालीयाजी, इम मती चिन्तवो एज हो । वी० ॥ ३ ॥ आगे हु करतो रंगसु जी, रूड़ा भोग विलास हो । हिवे इणपर वसु जी, नहीं मुझ रमणी पास हो वी० ॥४॥ इम मती चिन्तवो पूठलाजी, भोग-वीया कोई भोग हो । मन मद राचे चिन्त-व्यांजी, रूड़ा न केसी लोग हो । वी० ॥ ५ ॥

कोईक नर परदेशीयोजी, आय उतारो कीध हो । अहि विष तक्र मथन करीजी, अणजाणी तिण पीध हो । वी० ॥६॥ कोईयक नारी देखतांजी, नहीं जाणे कोइ वात हो । गयो परदेशी पावणोजी, जहर न चढीयो तिलमात हो । वी० ॥ ७॥ वरष दिवस वीती गयोजी, फिर आयो तिण ठाम हो । ते नारी तिण आगलेजी, वात प्रकाशी ताम हो । वी० ॥ ८ ॥ नारी मुखथी पाछलीजी, वात सुणीने ताम हो । ते पंथी तिहां भड़ पड्योजी, सुणतांइ आयो विष ताम हो । वी० ॥ ६ ॥ इण पर भोग जे पूठलाजी, नहीं चिन्तवे गुणवंत हो । चिन्तवीया इम उपजेजी, अहि विष तक्र दृष्टान्त हो । वी० ॥१०॥ इण पर जागे मोहणीजी, थासे व्रतनो भंग हो । तिण कारण रूड़ा मानवीजी, राखो व्रत सुरंग हो । वी० ॥११॥ इण पर श्रीजिनेश्वरजी, भाखे छट्ठी वाड़ हो । अगरचन्द इम उच्चरेजी, मेटे भवनी राड़ हो । वी० ॥ १२ ॥

दोहा।

तिमिर हरण शिव सुख करण, भाखे वीर जिणंद।
सातमी वाड़ सुणाता थकां, उपजे बहु आणंद॥१॥

ढाल सातमी।

उपगारी हो राजा॥ ए देशी॥ समोसरण वीच त्रीजगदीवापति, भाखे श्रीजिनराय हो। कर्म कटक सहु दूरे किधा, जीत नीसाण घुराया हो॥१॥ सुसनेही हो स्वामी, भाखे अंतर जामी हो। सु०॥टेर॥ सातमी वाड़ भविक मन राखो, सुरतरु फल चाखो हो। वचन अमोलख जिनवर केरा, कुमति कदाग्रह नाखो हो॥सु०॥२॥ सरस आहार न करे सियाणा, मदन बहोत दीपावे हो। शीलरत्न ब्रत खण्डित थावे, तो सब निष्फल जावे हो। सु०॥३॥ विगे तणो अति लालच छोडो, जिम थावो ब्रह्म-

चारी हो। मन वचन काया हिवड़े धारो, ते मुज आज्ञाकारी हो। सु० ॥४॥ मोदक आहार मदन दीपावे, नहीं सेवे गुणवन्त हो। निर्मल शील तणो व्रत राखे, ते करसे भव अन्त हो सु० ॥५॥ जिम कोइ कुष्टीनो रोग गमायो, वैद्य कह्यो इम करजे हो । मुझ औषध है साताकारी, मदिरा मत आचरजे हो। सु० ॥ ६ ॥ रसना लालच विषय पणाथी, ते रोगी मद पीधो हो । फिर रोगी बहु दुख पायो, जिभ्या रसनो गिरधी हो। सु० ॥७॥ इम सरस आहार मती सेवो, काम तणो मद जागे हो । शीलरत्न जतन करने राखे, ते नर उत्तम प्राणी हो। सु० ॥८॥ रत्न अमोलक वायस उपर, नाखी मुढ गमावे हो। सन्नीपातीयेने दूध सवाद्यो, फिर पीछे पछतायो हो। सु० ॥ ९ ॥ ब्रह्मचारी विषय निवारी, निश्चे शिवपुर फरसे हो । सरस आहारथी इन्द्रीयां पोषे, शुद्ध मारग नहीं फरसे हो। सु० ॥१०॥ सातमी वाड़ ब्रह्मचारीनी;

वीर जिणंद वखाणो हो । अगरचन्द इण पर भाखे, सूत्रनो मर्म पीछाणी हो । सु० ॥ ११ ॥

दोहा ।

जगत शिरोमण सायबो, सिद्धारथनो नंद ।
आठमी वाड इम उच्चरे, सुणाता अमृत कंद ।१।

ढाल आठमी

उंची चढ़ देखुं हो लुगायांरो टोलो आवतो ॥ एदेशी ॥ त्रिसलादेरा नन्दन हो स्वामीजी त्रिगड़े बेसने, इणपर दे उपदेश । निर्मल राखो हो वैरागी वाड़ आठमी, पामो सुख विशेष । त्रि० ॥१॥ अति घणो भोजन हो सुज्ञानी साधु मती करो, इम नहीं पलसो शील । अल्प आहारे हो साधुजी सुख पामसो, करसो शिवपुर लील । त्रि०॥२॥ अति आहारे हो साधुजी व्रत भांजसो, सुपनेमें थासो अशुद्ध । इम विचारो हो अति

आहार मती करो, निर्मल थासी बुद्ध । त्रि० ॥३॥ जिम कोई पंथी हो आयोजी एक शहरमें, निरख उतरीयो तिण ठाम । भूखनो पीड्यो हो पंथी दुखीयो थयो, पासे नहीं कोई दाम । त्रि० ॥४॥ घर घर फिरतो हो पंथी तब लावीयो, तंदूल कोइ उपाय । मनमें विचारी हो खीचड़ी करसु हिवे, इम मन धरी उछाय । त्रि० ॥ ५ ॥ भाजन छोटो हो खीचड़ी ऊरी अति घणी । तिणमें थोड़ो नीर । अगन घणेरी हो करी तिण हेठले, ते पंथी मत हीण । त्रि० ॥ ६ ॥ भाजन उपर हो मूकी शीला ढांकणो, ते पंथी मत मंद । तोलड़ी फूटी हो खीचड़ी खेरू थई, करतो फिरे आक्रंद । त्रि० ॥७॥ भाजन छोटो हो खीचड़ी ऊरी अति घणी, तो भाजन गयो फाट । इम ब्रह्मचारी हो अति आहार मती करो, तो पावो शिवपुर पाट । त्रि० ॥८॥ कोईक वेपारी हो गयो परदेशमें, करवा लाग्यो वेपार । पुंजी थोड़ी हो वीणज कीयो अति घणो, तो पुंजी नाखी

बिगाड़ । त्रि० ॥६॥ ते वेपारीने हो माथे ऋण बहु थयो, पिछतावे अणपार । ओढण थोड़ो हो मूर्ख इम किम सुवे, लाम्बा पांव पसार । त्रि० ॥१०॥ अल्प आहारे हो सुख पावे जीवड़ो नहीं हुवे रोग विकार । व्रत पण सैंठो हो थावे गुणवन्तजी, वेगा उतरसो पार । त्रि० ॥ ११ ॥ इण दृष्टांते हो राखो वाड़ आठमी, जे नर चतुर सुजान । अगरचन्द हो भाखे रूड़ी देशना. हिवे नवमी वाड उच्चार । त्रि० ॥ १२ ॥

दोहा ।

जग मंडल जिनराजीयो, सांचो परम दयाल ।
नवमी वाड़ इम उच्चरे, षट जीवां प्रतिपाल ॥१॥
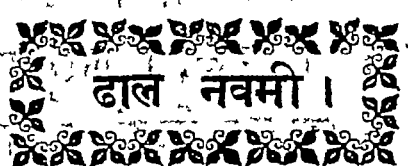
ढाल नवमी ।

फासु पाणी पीयो चारो चरो, बेठो ठंडी छांय हो ॥ ए देशी ॥ हिवे श्री वीर जिणंदजी, गुण-

मणी रत्न भंडार हो। नवमी वाड़ शिरोमणी, धारो हिवड़ा मझार हो। सुगणा साधुजी अंतर-जामीजी, स्वामीजी देवे देशना ॥२॥ ए टेर ॥ शरीर तणी शोभा मती करो, मती करो स्नान लिगार हो। सुगंधादिक मती आचरो, अत्तर विविध प्रकार हो ॥ सुग० ३ ॥ चटक मटक छोड़ो अंगथी. नहीं करणी कांई सेज हो। सज्या मदन सुहावणी. नहीं सुवे तिण सेज हो ॥ सुग० ४ ॥ फूल सुगंध सुहामणो, नहीं राचे गुणवंत हो। मन मद कुंजर वस करो, ते कहिये वलवंत हो ॥ सुग० ५ ॥ एक नर अटवीमें गयो, कोइयक जात कुंभार हो। माटी केर कारण, खोदण लागो गार हो ॥ सु० ६ ॥ ईम वहु माटी खोदतां, लाधो रत्न अमोल हो। मणी माणक मोती थकी, तिणसुं इधको मोल हो ॥ सु० ७ ॥ रत्न लेइ तिहां आवीयो, जिहां शिरताज हो। धोईने उजलो कीयो, सरतर पाल हो ॥ सु० ८ ॥ शरीर तणी

शोभा कारणे, ते मूर्ख मत मंद हो । मुक्यो सामो पाग में, हिवे सुणजो विरतंत हो ॥ सु० ६ ॥ सांवली आकाश में निरखीयो, जाण्यो मांसनो पिंड हो । ततखिण झड़पने लेगई, ते पंखी परचंड हो ॥ सु० १० ॥ रांक तणे घरे किम रहे, रत्न उद्योत प्रकाश हो । हिवे ते मूर्ख विलखो थयो, विल विल जोवे आकाश हो ॥ सु० ११ ॥ शरीर शोभा करता थकां, भाजे शील-रत्न हो । सांवली रूप नारी करी, करीये एहनो जतन्न हो ॥ सु० १२ ॥ नवमी वाड़ इम उच्चरे, त्रिशलादेरा नंद हो । अगरचन्द ईम कहे, शीलथी सुख आणंद हो ॥ सु० १३ ॥

ढाल दसमी

री माइरी ॥ एदेशी ॥ ग्रहण मांहे चंद शिरोमण, हीरा खान बहु मोलरी माइ । स्फ-टिक रत्न सहुमें मोटो, सर्वव्रतां मे शील अमो-

लरी माइ ॥ १ ॥ धन धन यो व्रत वीर परूप्यो ॥ ए टेर ॥ जगत दयाकर जगतपति, प्रभु सासणना सिणगार रे माइ । ब्रह्मचर्य इम वरणवीयो, शिव रमणी भरतार री माइ ॥ धन० ॥ २ ॥ आभूषण में मुगट मनोहर, खेम जुगल वस्त्र मंझार री माइ । चंदन में बावनों गिरि में मेरु, नदीयां में सीतोदा साररी माइ ॥ धन० ॥ ३ ॥ सयंभूरमण सागर शिरोमण, रूचक वाटला आकाररी माइ । हस्त्यां में ऐरावण मोटो. शील वड़ो शिरदाररी माइ ॥ धन० ॥४॥ चोपदां मांही सिंह शादुलो, सोवन वेणु कुमाररी माइ । नागकुमारांमें धरणेन्द्र मोटो, शील-रत्न श्रीकाररी माइ ॥ धन० ॥ ५ ॥ मोटो जिम सुरलोक पांचमो, सभा सुधरमी जाणरी माइ । सर्वार्थ सिद्धरी थिति मोटी, शील तणो व्रत जेमरी माइ ॥ धन० ॥ ६ ॥ दान पांचमो सुपात्र मोटो, किरमची रंग सुरंगरी माइ, वज्रऋषभनाराच मोटो, शील तणो व्रत चंगरी माइ ॥

धन० ७ ॥ संठाणा में समचोरस मोटो, ध्यान शुक्ल बड़ धीररी माइ । पांच ज्ञानमें केवल मोटो, शीलव्रत शूरवीर री माइ ॥ धन० ८ ॥ षट लेश्या मांहे शुक्ल बडेरी, साधां में तीर्थंकरदेव री माइ । क्षेत्र विदेह सहु मांहे मोटो, शील व्रत छे जेमरी माइ ॥ धन० ६ ॥ राजा में चक्रवर्त्त मोटो, वनामें नंदन वनरी माइ । तरुवर में जिम सुरतरु मोटो, शीलव्रत गुण गेहरी माइ ॥ धन० १० ॥ रथामें कृष्ण तणो रथ मोटो, सहस्र फणी नागकुमाररी माइ । ओपमा केता पार न आवे, संक्षेपे बत्रीस साररी माइ ॥ धन० ११॥ उत्तराध्ययन अध्ययन सोलमें, शील तणो अधिकाररी माइ । संक्षेपे कर रचना कीधी, जिन गुण न आवे पाररी माइ ॥ धन० १२ ॥ सम्बत अठारे वर्ष गुणीयासे, भाद्रवा सुद मासरी माइ । शुक्ल पक्ष तिथि दशमी दिवसे, किधो प्रेम हुलासरी माइ। धन० ॥ १३ ॥ खरत्तर गच्छ शिरोमण सुंदर, हरखचन्द

तास शिष्य गुण सुगड़ पयंपे (परुपे), सरुपच-न्द गुरू रायरी माइ। धन० १४॥ अगरचन्द कहे शील शिरोमण, मुगत तणो दाताररी माइ। रामपुरा में ए गुण गाया, हिवड़े हरष अपाररी माइ। धन० ॥ १५॥ ए अधिकारे ओछो अधिको, वचन कह्यो अविचाररी माइ। मिच्छामि दुक्कडं तेहनो मुझने, कविजन लीजो सुधाररी माइ॥ धन० १६॥

॥ इति श्री ब्रह्मचर्यनी ढाल्यां सम्पूर्णम्॥

शील की ३२ ओपमा

सूत्रश्री प्रश्न व्याकरणजी रा चौथे संवर द्वार में शील की ३२ ओपमा चाली छे सो कहे छे।

१—सर्व ग्रह नक्षत्र तारा के परीवार में चन्द्रमा जी मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतामें शील-व्रत मोटो नें प्रधान।

२—सर्व आगर में रत्नाकर आगर मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रता में शील व्रत मोटो नें प्रधान।

३—सर्व रत्नकी जात में वैडूर्य नामा रत्न मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतामें शील व्रत मोटो ने प्रधान।

४—सर्व आभरण (आभूषण) में माथेरो मुकट मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतांमें शील व्रत मोटो नें प्रधान।

५—सर्व वस्त्र में खेम युगल नामा कपास को

वस्त्र मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रता में शीलव्रत मोटो नें प्रधान।

६—सर्व फूल की जातमें अरविंद नामा कमल को फूल मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतामें शील व्रत मोटो नें प्रधान।

७—सर्व काष्टादिक री जातमें गोखीर नामा बावनो चन्दन मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतांमें शीलव्रत मोटो नें प्रधान।

८—सर्व पर्वत में चूलहेम नामा पर्वत औषधि करि मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतांमें शील व्रत मोटो नें प्रधान।

९—सर्व नदी में सीता सीतोदा नदी मोटी नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतां में शील व्रत मोटो नें प्रधान।

१०—सर्व समुद्र में स्वयंभूरमण समुद्र मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतांमें शील व्रत मोटो नें प्रधान।

११—सर्व पर्वत में रुचिक नामा पर्वत चूड़ी के

आकार मोटो नें प्रधान ज्यों सर्व व्रतां में शील व्रत मोटो नें प्रधान।

१२—सर्व हाथी में श्री शक्रेंद्र महाराज री ऐरावण हाथी मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रता में शील व्रत मोटो नें प्रधान।

१३—सर्व चौपदा में केशरीसिंह नामां सिंह मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतां में शील व्रत मोटो नें प्रधान।

१४—सर्व नागकुमारजी री जात में श्रीधरणेंद्रजी मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतामें शील व्रत मोटो ने प्रधान।

१५—सर्व सोवणकुमारजी री जातमें वेणदेवजी मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतामें शील व्रत मोटो ने प्रधान।

१६—सर्व सभामें इन्द्र महाराज री पांचमी सुधर्मा सभा मोटी नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतांमें शील व्रत मोटो नें प्रधान।

१७—सर्व देवलोक में पांचमो ब्रह्म देवलोक

मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतामें शील व्रत मोटो नें प्रधान ।

१८—सर्व स्थितिमें सर्वार्थसिद्ध रे देवता री स्थिति मोटी नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रता में शील व्रत मोटो नें प्रधान ।

१९—सर्व दानमें अभयदान सुपात्रदान मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतां में शीलव्रत मोटो नें प्रधान ।

२०—सर्व रंग में किरमची रेशम को रंग मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतांमें शीलव्रत मोटो नें प्रधान ।

२१—सर्व संघयण में वज्रऋषभनाराच संघयण मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतामें शीलव्रत मोटो नें प्रधान ।

२२—सर्व संठाण में समचोरस संठाण मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतामें शील व्रत मोटो नें प्रधान ।

२३—सर्व लेश्यामें शुक्ल लेश्या मोटी नें प्रधान,

ज्यों सर्व व्रतां में शील व्रत मोटो नें प्रधान।

२४—सर्व ध्यानमें शुक्ल ध्यान मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतांमें शील व्रत मोटोनें प्रधान।

२५—सर्व ज्ञान में केवलज्ञान मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतों में शील व्रत मोटो नें प्रधान ।

२६—सर्व मुनिराज रे परवार में श्रीतीर्थङ्कर महाराज मोटा नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतामें शील व्रत मोटो नें प्रधान।

२७—सर्व क्षेत्र में महाविदेह क्षेत्र मोटो ने प्रधान, ज्यों सर्व व्रतामें शील व्रत मोटो नें प्रधान।

२८—सर्व पर्वत में मेरु नामां पर्वत ऊंच पणे मोटो नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतां में शील व्रत मोटो नें प्रधान।

२६—सर्व वन में नन्दनवन मोटो ने प्रधान, ज्यों सर्व व्रता में शील व्रत मोटो नें

प्रधान।

३०—सर्व वृक्षमें जम्बू सुदर्शन नामा वृक्ष मोटा नें प्रधान, ज्यों सर्व व्रतां में शील व्रत मोटो नें प्रधान।

३१—सर्व साहिबीमें चक्रवर्त्त री साहिबी मोटीनें प्रधान, ज्यों सर्व व्रता में शील व्रत मोटो नें प्रधान।

३२—सर्व रथ में वासुदेवजी को गरुड़ ध्वजा नामे संग्रामी रथ मोटोनें प्रधान, ज्यों सर्व व्रता में शील व्रत मोटो नें प्रधान।

इति

अथ सोलरा सोले कड़ा लिख्यते ।

ढाल कड़खानी देशी ।

धर्मना छे जीव अनेक प्रकारक, व्रत कह्यां पांचु मोटाजी सारक, शील समान जी को नहीं । सूत्र पुराण कुरान विचारक, शीलनें सब कोइ वरणावे । शीलसुं राखज्यो प्रीति अपारक, बेगाजी परभव पोहोंचस्यो । दुःख देसी तिहां काम विकारक, आकेजी आंब न लागसी । संबलो लिज्यो जी समकित सारक, शील संघाते जो जे मिलै । रत्न जड़ित जाणे सोवननो हारक, ओ सिणगार सुहामणो । शील समो नहीं कोइ ओर आधारक, शील अखंडित सेवजो ॥ १ ॥ जे होजी चंचल कुंजर कानक, वेग पड़े जिम पाको पीपल पानक, जेहवी चंचल बीजली । अथिर जाणो जीसो संध्यारो बाणक, डाभ अणी जल बिंदवो । एहवो जोबनस्युं अभिमानक, खिण खिण जाय छै । विषय सें मत राच

जो विष समानक, फल किंपाकनी ओपमा । सुख नहीं ओ दुखांरीजी खानक, तृपत होय कोई मुवो नहीं । इन्द्र नरिन्द्र बड़ा २ राजानक, आसा अलुभ्या ही चल गया । परभवमें होसी घणा रे हैरानक, रमणीरे रूप मत राचज्यो । सूत्रमें भाख्यो श्री भगवानक, शील० ॥ २ ॥

सुद्ध शील पाल्यां कुलने कलंक न होयक, जिन धर्म साचो कर जाणज्यो सोयक, पापने मूल थकी परहरो । देव देवी तणा पूजनीक होयक, जश वधै त्रिहुं लोकमें । रोगने आपदा ते नहीं होयक, मोक्ष गामी हुवे शील सुं । शील सुं अग्नि शीतल होयक, शीलसुं जहर अमृत हुवे। शील सुं सर्प फूलांरी मालक, हस्ती हुवे बकरी सारखो । सिंह हुवे ते मृग समानक, आपदा टाले संपदा मिले । कामण दुष्ट मुष्ट शील देवे टालक, समुद्र थाग देवे शील सुं । सुमेरु टीवो हुवे तत्कालक, श्री वीर जिनेश्वर इंम भणे । ए गुण जाणीने शील सुद्ध पालक, शील० ॥ ३ ॥

चोथेजी संवर दशमेंजी अंगक, अरथ कह्या सुणज्यो मन रंगक, अंग थकी आलस परिहरो, बारेइ परखदा जेहने संगक, वाणी छे जोजन गामनी। श्रीवीर वखाणीयो शील सुचङ्गक, सुगणा माणस मन मानजो। जिण आदरयो शील घणे उछरंगक, ते तीरिया संसार समुद्रसुं। शेष बाकी रही नदीजी गंगक, जतन घणा कर राखज्यो। एक भागां सर्व व्रतांरो भंगक, ते भणी ब्रह्मचर्य मोटको। मोटो कह्यो छोटांरे परसंगक, बतीस ओपमा वर्णउं। एक एकसु अधिक सुणो मन रंगक. शील० ॥ ४ ॥

ग्रह गण मांहि बड़ो जिम चन्दक, रतनाकर आगर मांहि समुद्रक, रत्ना में वैडुर्य मोटको। आभूषण इधक मुकट सोभंतक, वस्त्रामें मोटो कपासक। फूलांमें मोटो अरविंद फूलक, चन्दन में गोसीस वखाणीयो। चुलहेम पर्वत मोटो औषधि वृंदक, नदीयांमें सीता छे मोटकी। समुद्रामें मोट को स्वयंभु समुद्रक, रूचक गिरि

पर्वत मोटो गोलक। हस्त्यांमें ऐरावण इन्दक, चोपगामें सिंह केसरी। सुवर्ण कुमारामें वेणुजी देवक, धरणीन्द्र नागकुमार में। सगला व्रतां रो अधिपति शील सुजाणक, शील० ॥५॥

देवलोकामें मोटो पांचमो जाणक, सभामें सुधर्मा सभा वखाणक, थितां में लोक समह कह्यो। दानामें मोटो अभयजी दानक, रंगमें किरमची मोटको। संघयणांमें मोटको पहिलड़ो जाणक, समचौरस मोटो संठाणक, ध्यानमें शुक्ल मोटको ध्यानक, ज्ञानामें केवल दीपतो। लेश्या नहीं कोइ शुक्ल समानक, मुनीसरामें तीर्थंकरा। क्षेत्रामें मोटो महाविदेह जाणक, पर्वतांमें मेरु ऊंचो कह्यो। वनामें नन्दनवन वखाणक, रथामें महारथ मोटको। सगला व्रतांरो अधिपति शील वखाणक, शील० ॥६॥

सुगुणा माणस तुमे सांभलो रासक, जाय छे जोबन तुटे छे आसक, तो सधीरा रहज्यो सही। इण जुगमें कामणी मांडीयो फासक, विषय विलाश मति

राचज्यो । इण जुग दलपति थया छै दासक, आंख आणी किम उघड़े । मोड़े छे अंग करी मुख हांसक, इण जुग दास सम राखसी । वलि धन जोवन करे छे विणासक, नाम छे अबला नारनो । इन्द्र नरेंद्र कऱ्या सहु नासक, त्रिभुवन पाय लगावीया । निजर पड्यां करे शीलनो नासक, विषय वधावन पापणी । दुर तज्यां मिले शिवपुर वासक, शील० ॥ ७ ॥

नारी रे कारण हुवा सबल संग्रामक, बड़ा बड़ा भुपत रह्या इण ठामक, कट २ मुवाजी अतिघणा । कुण २ नगरने कुण २ ग्रामक, कहुं छुं थोड़ीसीक बानगी । चित्तलगाय सुणो तेहना नामक, द्रोपदी रे परसंग थो । कृष्णाजी पाड़ी पदमोतरनी मांमक, रावण सीताने अपहरी । भारत थाप्यो छे लिछमण रामक, रुक्मणीने पदमावती । कृष्णाजी परण्या छे करी संग्रामक, उदाइ चंडप्रद्योतनें । ते पिण सुवर्ण गुलिकारे काजक, अर्जुन जुद्ध किया घणा । रतनभद्रा परणवारे काजक, शील० ॥८॥

मैणरया तणो कारणो जाणक, मणरथ हणीया वन्धव प्राणक, मरने गयो नरक सातमी । चंड-प्रद्योतन राजा पिछाणक, मृगावतीनो रूप सांभ-ल्यो । सेन्या लेआयो मोटे मंडाणक, कोसुंबीनगरी घेरोदियो, जीवां घणारा किया घमसाणक, रोहणी परणवा कारणे । राय वसुदेव किया युद्ध ताणक, वलि राणी पद्मावती तेहने । कोणक वचन किया प्रमाणक, दस भाई दुमात मरावीया । नानारी मूल न राखीजी काणक, एक कोड असी लाख उपरे । माणस मराय किया घमसाणक, शील० ॥ ६ ॥

अथिर जाणो जीसी आभानी छांयक, अथिर जाणो जीसी कायर बांहक, अथिर कन्या धन जेहवो । अथिर जाणो जीसो धंवर मेहक, अथिर राजा जीसो दुवलो । अथिर जाणो जीसो ग्रीष-मनो मेहक, अथिर फुसनो तापणो । अथिर जाणो जिसी मानव देहक, अथिर ध्वजा देवल तणी । अथिर धनुष आकाशनो तेहक, अथिर कुंभ माटी

तणो। फूट जावे लाग्यां थोड़ी सी ठेसक, अथिर रंग पतंगनो । अथिर जाणो जिसो नारी सुं नेहक, प्राण जो आपेजो तेहने । तो पिण छोड़ी या देखालसी छेहक, शील० ॥ १० ॥

नारीना चरित्रानो नहीं कोइ अंतक, उंदरो देखीने हुवे भय भ्रांतक, साप ओसीसे ले सुवे । देहली उलंघतो दुख धरंतक, काम पड्यां गिरिवर चढे । सांकल लगावाने कपट महंतक, कंथ हणी धरणी ढले । नारीना संग थकी दुख अनंतक, धरणी नाथ धुजावीयो । त्रण मांहे रंग विरंग करंतक, मूंज राजा तणो त्नय कियो । नर किसुं नारि देख चरित्रक, नारी बीजी वश पड़तां । फांस पड्या पछे कोइ छुटंतक, पहलाइ आपो संभालज्यो । मत करो रमणी सुं रमवारी ख्यांतक, शील० ॥ ११ ॥

काम क्रीडा वालो छे कारक, कुलतणे केड़े उडावेजी छारक, उलटी वेवे मदसुं छकी । उंच छोडी करे नीच सुं अणाचारक, विरची

वाघण सुं बुरी । इण जुग चित्तनी चोरन हारक, छल छिद्र जोवती रहे । काम कटक माहिं नायक नारक, लोयण बाणा करी भलकती । लहकती वेणी तीखी तरवारक, लाखां गमे आगे लुंटीया । अरणकादिकने आद्र कुमारक, मोटा ऋषीसर ते हुवा । संजम धन लीयो छे धूतारक, नरक देवी जिनवर कही । नारीनी संगत वरजी वारूं-वारक, शील० ॥ १२ ॥

ओरांनो रूप जोवे सिणगारक, ओरांसु भोगवे भोग विलासक, वचन ओरांने रिंझवे । ओरने चिंतवे चित्त मझारक. आल देवे सिर ओर रे । कूड़ तणी कोथली कपट भंडारक, काले काजल तणी कुंपली । कामणी विणासीयो सर्व संसा-रक, मधुरा वचन विसासीया । विरचतां कांइ न लागसी वारक, स्वारथ दीसे अण सीझतो । नारी विणासीयो निज भरतारक, सूरीकंता संभालज्यो । नारी रा ओगणा रो नहीं कोइ पारक, एकण जीभ सुं किम कहुं । नारीनो

नेह जीसो नीपरा छारक, शील० ॥ १३ ॥

सगली नार चंचल नहीं होयक, पुरुष भला मत जाणज्यो सहु कोयक, नरने नारी ज्युं जाणज्यो। आपणो दोषण जांण ज्यो सोयके, विषय सेव्यां दोनु बुरा। शील सुं शिवपुर दोनाने होयक, नारी कुलच्छण किम होवे। पुरुष सहु सुलच्छण होयक, ताली बजैजी किण बिधे। एकण हाथ बाजे नहीं कोयक, पुरुष केइ परनार सुं। सेइ कुशील जनम गया खोयक, पाप उदे हुवे इण भवे। राजा खोसै लूंटे शूली देवे पोयक, परभव में दुख भुगते घणो। इण सम फांस बंधण नहीं कोयक, शील० ॥ १४ ॥

नारी हुइ केइ शील तणी खाणक, वीर जिणंद किया ज्यांरा वखाणक, कष्ट पड्यां कायम रही। चंदनबालाने चेलणा जाणक, राजमतीने द्रौपदी। सुभद्रा सतीने सीता वखाणक, मयणरेहा कमलावती। दवयंती अंजणा शीलनी खाणक, श्री मृगावतीने पदमावती। प्रभावती

नहीं वखाणे । देवादिकना दुःख देख धर्म नहीं छांडे, चढते परणामे करणी अधिकी मांडे । धन धन विजय कुंवरजी• ॥ २ ॥

तीणहीज देशने तीणहीज नगर मांही, शेठ धनाको कुंवरी वल्लभकारी । विजया नामे कला बड़ी चतुराई, बालपणेमें गुरुणीकी संगत पाई । एक दिन सुणयां शीलतणा बखाणो, सघला व्रतोंमें ओपमा अधिकी आणो । जब तन मन मांहे बारे व्रतज लीना, सघला व्रतोमें शील शुक्ल पक्ष कीना ॥ धन धन विजयकुंवरजी० ॥ ३ ॥

पुन्य जोग मिली विजयाकुंवरी गुणवंती, शुद्ध चोसठ कलाकी जाण महा बुद्धिवंती । गज गामनी रमणी बोले कोकिल वाणी, कोमल कंचन तन वदन भाण भलकाणी । अति अधर लाल कोमल कपोल कुच सोहे, कर चरण उदर और चतुर तणा मन मोहे । वहु हरख भावसें विजयकुंवरजी व्याये, पुन्य योगे जोड़ी मिली परण घर आये ॥ धन धन० ॥ ४ ॥

हीवे विजय कुंवरनी सोहे सुन्दरताई, सुर नर सम सुन्दर देवरूप छबि छाई। कानों बेहु कुंडल रत्न जड़ीया सोवे, शिरोमणि मुक्ता फल जड़िया मुगट छबी मोवे। जारी हे आर निर्मल नेतरासी भारी, कर कंकण चमकण मुंदडियों छबि न्यारी। ज्यांरा वदन भाण निरमल नेतरासी सोवे, इत्यादिक गुणकर विजयकुंवर मन मोवे ॥ धन धन० ॥ ५ ॥

जाई रंग महलमें बैठे पलंग बिछाई, प्रीतम की सेजां सुंदर सजकर आई। अणीयांलां काजल बिजलियां चमकंती, पीयु आगे उभी मन मांहे मुलकंती। चमके चुंदडियां श्री चुड़ामणी चमकंती, नकवेसर वेणी झुमरीयां झमकंती। और वदन दीखावे काम जगावे बाला, इन्द्राणी सरीखी उभी रूप रसाला। प्रीतमको आदर, मांगे सुन्दर उमाई, तन मन हुलसंती उभी आशा लाई ॥ धन धन० ॥ ६ ॥

तब विजय कुंवर कहे हो सुन्दर भले आई

पिण हिवड़े तुमसु काम नहीं छे कांई। दिन तीन लगतो नहीं मदनकी चाई, तुम हमके पीछे सुखे सुखे दिन जाई। कहे कुंवरी कुंवरों कहो कारन छे कांई, हुं तन सजकर सुंदर आई छूं उमाई। इण अवसर वीरिया किम वरजो प्रीतम जी, हम नेम लियो छे सुन्दर तूँ नहीं समझी ॥ धन धन० ॥ ७ ॥

कर जोड़ी पूछे कहो प्रीतमजी हमने, किसी भांतसुं नेम लिया छे तुमने। कहे मुज बाल पणे सुं शील रुच्यो मन मांही, किया कृष्ण पक्षका त्याग मुनि पे जाई। जद विजय सुंदरी उभी मुख विलखाई, थी मुझमन आशा रही अबे मन मांही। तब विजयाकुंवर कहे सुंदर क्यों कुमलाई, जिम है तिम मुझको वेग कहो फुरमाई ॥ धन धन० ॥ ८ ॥

तब विजय सुंदरी धीरज पणा मन लाई, नेतर नीचा कर जोड़ी कहे मुरझाई। कहे मुझ बालपणे थी शील रुच्यो मन मांही, मेरा परण-

वारा परणाम नहीं था कांई। गुरुणी पे करिया शुक्ल पक्षका सोगन, अब तो म्हारे हुया सरवथा त्यागन। तुमतो प्रीतमजी परणो नार अनेरी, पहिली पण इच्छा शील तणी थी मेरी॥ ॥ धन धन०॥ ६॥

तब विजय कुंवर कहे सुण वल्लभ गुणवंती, अब आ हमने तुमनी जोड़ मिली दीपंती। अब रतन छोड़ कुण काच लेत सुण प्यारी, शुद्ध शील पालश्यां सुगति रमणी छे त्यारी। बह देव लोकनां सुख विलस्या बार घणेरी, पण मनशा पूरण हुइ नहीं किसकेरी। जीव नरक निगोद भम्यो भवसागर मांही, बहूकाल गमायो गरज सरी नहीं कांई॥ धन धन०॥ १०॥

ये पांचों इन्द्रियां वश पड़ीया प्राणी जेवा, रूलिया चोरासी च्यार गतिमें तेहा। एक एक इन्द्रीवश पड़कर मरीया प्राणी, मृग मीन पतंगीया मधुकर हस्ती जाणी। पांचो वश पड़ीया जड़ीया नरक जंजीरा, नरकां मांहे खल बल

खीचड़ीयां जिम खीरा । ये तात मात सुत भ्रात मीले स्वारथका, चढ़ते परणामां शुद्ध शील पालसां नितका। यह अमृत वाणी सुणकर कुंवरी हरखो. श्रीविजय कुवरना गुण हिये बीच परखो ॥ धन धन० ॥ ११ ॥

ये पांचों इन्द्रियां वश पड़ीया प्राणी जेवा,रुलिया चोराशी च्यार गतिमें तेहा । अब उत्तम कुल अवतार लियो छे आई, पुन्य जोगे मुनिवरनी जोगवाई पाई । धन धन शील निर्मलो पाले नर अरु नारी, उत्तम पुरषांरी जाउं निज बलिहारी। इण अल्प सम्पदा काज कुम्भ किमि खोईए, ज्युं बाटी सटे खेत खोयां दुःख होइए ॥ धन धन० ॥ १२ ॥

कर जोड़ी कुंवरी करे कुंवरसे अरजी, यह बात छानी किम रहशे कुंवर जी। सुसरा सासु सुण घणा खीजसी तुमपे, किम घणी शरमसुं रइयो जासी हमपे । प्रीतम कहे प्यारी आपांने आई शिक्षा, यह बात प्रगट्यां निश्चय लेसों

दिक्षा। सुवे एकण सेज्यां सुन्दर और शाई, बेठा बतलावे बहिन अने ज्युं भाई ॥ धन० ॥ १३॥

बेहु बीरीयां करे पडिक्कमणो ने समाई, कर दान शीयल तप भली भावना भाई। इम बारे वरस हुवा इमज करतां, तब वात विस्तरी शील पणे बीचरतां। त्यां विजय कुंवरने विजया कुंवरी केरा, श्री विमल केवली किया वखाण घणेरा। सुवे एकण सेज्यां शील निर्मलो पाले, बेहु बाल ब्रह्मचारी आतमकों उजवाले। बेहु चरम शरीरी छे महा उत्तम प्राणी, सुण अचरज पाया सुणी केवली मुख वाणी ॥ धन० १४॥

जिनदास श्रावकने सुपनेमें मुनिवर दीठा, चोरासी सहस्त्र मुनीसर लाग्या मीठा। निरदोषण आहार हाथों हरख बेराया, जागीने देखे मुनिवर एक न पाया। श्री विमल केवली पासे प्रश्न पूछे, कहोजी प्रभुजी इण सुपनेको फल शुं छे। आ वात अछत्ती भाव तुमारा होशी,

सो विजय शेठ तुज मिलीयां ढिज्ञा लेसी ॥ धन धन० ॥ १५ ॥

जिनदास श्रावक सुणी बहुत हुयो प्रसन्न, चित्त मांहे चिंतवे करूं जाय तिहां दरसन । वहु हरख धरीने आयो नगर कुसुंबी, तिहां विजय कुंवरनी कही वात अचुंबी । बहु उत्सव करने नेत्या कुंवर कुंवरी, समसत परिवार जिमायो हरष धरी । ये जद तात मात कुंवरना गुण उमाया, तुम कहो सेठजी कुण सगपण थी आया ॥ धन धन० ॥ १६ ॥

जिन धरम सनेही करी यहां शेठ हूं आयो, शीलवंत कुंवर कुंवरीनां दरशन पायो । धन तुम चा कुलमें उपना उत्तम प्राणी, श्री विमल केवली शोभा घणी वखाणी । सुवे एकण सेजां शील निर्मलो पाले, बेहु बाल ब्रह्मचारी आतम कुं उजवाले । आ अचरज सरीखी वात सुणीने हुं आयो, सो भाव मुनिना निरमल दरसन पायो ॥ धन धन० ॥ १७ ॥

जद तात मात कहे कहोजी हमको नाता, थां किसी भांतसुं नेम लीया छे छाना। जद नीची निजुरां कर कहे बात विस्तारी, अब संजम लेवानी मरजी छे हमारी। जद तात मात पे मांगे कुंवर आज्ञा, जद मात पीता बहु हठ करवाने लाग्या, लेइ मात पीता पे बहु हठ करने शिक्षा, चढ़तां परणामां दोनुं लीधी दिक्षा। धन धन०॥ १८॥

मुनि महाव्रतधारी जितेन्द्री ब्रह्मचारी, तज क्रोध मान माया मद मत्सर भारी। ज्यांरे करण भाव सत्य जोग ध्यान गुणधारी, मुनि क्षमावंत वैराग्यवंत अधिकारी। मन वचन काया तीनुं समा धारणीया, रोग मरण वेदना तीनु आयां सहनीया। ज्ञान अने चारित्रवंत गुणधारी, ये सत्ताइस गुण सहित बाल ब्रह्मचारी॥ धन धन०॥ १९॥

पढ़ि पंडित हुवा तपस्यासें लव लाया, बहु जीव सुधारी शुद्ध समकित पद पाया। जे अ-

छत्री वंच्छे छत्ती किम छिटकाइ, धन धन विजय मुनीश्वर अधिक करी अधिकाइ। चढतां परणामा करणी कीधी निर्मल, बेहु मुक्ति पहुंता दोनुं पाया केवल। बेहुं मुक्ति महलमें जाय विराज्या स्वामी,ने अजर अमर पद ज्योति अनंती पामी ॥ धन धन० ॥ २० ॥

जिहां जन्म मरण जरा रोग शोग नहीं कांई, जिहां अलख अखंडित अविनाशी पद थाई। जिहां भूख तृषा और शीत उष्ण वेदना नहीं होवे, जग ज्योति अरूपी झगमग झगमग सोवे। जिहां शब्द रूप गंध रस स्पर्श नहीं पावे, थइ निराकार पूरव फिर उदे नहीं आवे। जिहां चाकर ठाकर नहीं रंक और राजा, एवा सुख पाम्या सार्या आतम काजा ॥ धन धन० ॥ २१ ॥

ये भाव सुणी श्री विजय कुंवरजी केरा, शुद्ध शील पालजो भला होयसी तेरा। घरकी मर्यादा परनारी परिहरीये, जेसुं अपयश होवे

जीसो कारज नहीं करीये। घर सारूं दान शील तप भली भावना भावो, शुद्ध शील पालकर लेवो मनुष्य जन्मको लावो। आठम चवदश पांचे पर्वी टालो, शक्ति होवे तो शील सर्वदा पालो ॥ धन धन० ॥ २२ ॥

ये ग्रन्थ देखने गुण विजय कुंवरना किया, अधिके ओछेना मिच्छामि दुक्कडं लीया। जयणा मुख वाच्यां होसी गुण अति भारी, अजयणा वाच्यां उलटी होसी खवारी। मुज उपगारी था दोलतरामजी स्वामी, गुणग्राम किया ऋषि लालचन्दजी सिरनामी। सम्वत अठारेसे इकसठ अवसर पाया, श्री कोटे के रामपुरे गुण गाया धन धन० ॥ २३ ॥

॥ इति विजयकुंवर विजयाकुंवरी का स्तवन समाप्तम् ॥

ब्रह्मचर्य की नववाड़

॥ दोहा ॥

सरस्वती सामरा विनऊ, गणधर लागु पाय ।
शील तणी नववाड़ कुं, गांऊ मन हुलसाय ॥

(१) पहिलीवाड़—ब्रह्मचारीजी स्त्री पशु पिंडक सहित स्थानक भोगवे नहीं, जो भोगवे तो मुसा बिल्ली को दृष्टांत ।

॥ दोहा ॥

पहिली वाड़में साधुजी, निर्मल स्थानक देख ।
पशु पिंडक नें कामणी, जहां न रहवे एक ॥
दोप सहित स्थानक रहे, तो होय व्रतको भंग ।
जैसे मुसके विलायको; भलो नहीं सत संग ॥

(२) दुजीवाड़—ब्रह्मचारीजी स्त्री री कथा वारता करे नहीं, जो करे तो निबुंको दृष्टांत ।

॥ दोहा ॥—

तजो कथा नारि तणी, भली बुरी संसार।
कथा कहे जो नारी की, जाय विरति निर्धार॥

—:※:—

(३) तीजीवाड़—ब्रह्मचारीजी स्त्री के आसण ऊपर बैसे नहीं, जो बैसे तो घी रे घड़े ने अग्नि रो दृष्टांत।

॥ दोहा ॥—

तजो संग नारि तणो, मति को राचो रंग।
एक ही शय्या बैठतां, होय व्रत को भंग॥

—:※:—

(४) चौथीवाड़—ब्रह्मचारीजी स्त्री रा अंग ऊपांग निरखे नहीं, जो निरखे तो आंख री काचीकारी ने सूर्य्यको दृष्टांत।

॥ दोहा ॥

रङ्ग पतङ्ग है नारी को, जैसो सन्ध्या को वान।
मूरख मन लवल्या लगी, धरे निरन्तर ध्यान॥

—:※:—

(५) पांचमीवाड़—ब्रह्मचारीजी स्त्री पुरुष विषयादि करता होय उस टाटी भींत पास नहीं रहे, जो रहे तो मोर गाज रो दृष्टांत।

॥ दोहा ॥

टाटी भींत परीछ के, अन्तर मुनि न वसाय।
काम केल नर नारी को, भनक कानमें जाय॥

—:*:—

(६) छट्ठी वाड़----ब्रह्मचारीजी पूर्वला काम भोग चितारे नहीं, जो चितारे तो परदेशी नें बुढ़ियाकी छाछको दृष्टांत।

॥ दोहा ॥

प्रथम भोग जो भोगियां, याद करे नहीं संत।
भोग चितारे पाछिले, होय व्रत को अंत॥

(७) सातवींवाड़—ब्रह्मचारीजी सरस रस प्रणीत पुष्ट आहार करे नहीं, जो करे तो सन्निपात रोग कुं दुध मिसरी को दृष्टांत।

॥ दोहा ॥

ब्रह्मचारी भारी गुणो, सुणो बात हितलाय।
राखे चाहे शील कुं, सरस आहार मति खाय॥

—:o:—

(८) आठवींवाड़---ब्रह्मचारीजी मर्यादा उ- परान्त अधिको आहार करे नहीं, जो करे तो बोदि कोथली को दृष्टांत।

॥ दोहा ॥

अति आहार तूं मती करे, जो सुख पावे जीव।
अधिक रोग पैदा करे, पड़ा करेगा रीव॥

—:※:—

(९) नवमी वाड़—ब्रह्मचारीजी शरीरकी शुश्रुषा विभूषा करे नहीं, जो करे तो रांक हाथे रत्न को दृष्टान्त।

दोहा।

शोभा छांड़ो देहकी, आभूषण अलंकार।
जो नरने शोभा करी, गया जमारा हार॥

दोष होत है शील कूं, रांक रत्न तूं जोय ।
जैसे विप्र समुद्र में, रह्यो रत्न कूं खोय ॥

॥ इति ब्रह्मचर्य की नववाड़ दोहा सहित समाप्तम् ॥

—:o:—

ढाल शीलरी ।

चोवीशे जिन आगमे रे, भाख्यो शीयल निधान । ब्रह्मचारी भगवंत समो रे, एम बोले वर्द्धमान ॥ सुगुण नर, सेवो शीयल निधान ॥ १ ॥ शील समो जग को नहीं रे, शीयले मले सवि थोक । तप जप कीरीया जे करे रे, शीयल बिना सरवे फोक । सुगुण० ॥ २ ॥ देवदानव सुर पाय नमेरे, उत्तराध्ययनीसाख । शीयले सुर पदवी लहे-रे, श्रीजिन आगम भाख । सुगुण० ॥३॥ रोक्या ते दुरगति वारणां रे, भाख्यो संवर द्वार । छव मासी तप फल कह्युं रे. माहानिसीथ मझार ॥ सुगुण० ॥ ४ ॥ देखो सीताजीने कारणे रे,

पावक शीतल कीध । द्रौपदी संकट सवि टल्या रे, नेमीराजुल जश लीध । सुगुण० ॥५॥ इति

ढाल शीलरी

एरे लाला समकित सखी एम विनवे, तुमे सेवो शीयल निधान रे लाला । इह लोके सुख संपदा, परलोके देव विमान रे लाला ॥ शीयल सुरंगा मानवी, तसे राखो शियल सुं रंग रे लाला ॥ शियल० ॥ १ ॥ एरे लाला क्षण एक सुखने कारणे, असंख्याता समुच्छिम जंत रे लाला । पंचम अंगे हिंसा कही, ते केम करे मतिवंत रे लाला ॥ शियल० ॥ २ ॥ एरे लाला नव लाख गर्भावासना, तेने कोण विदारे मूढ रे लाला । ते समो पापी बीजो नहीं, सेवे मैथुन ने मल मूत्र रे लाला ॥ शियल० ॥ ३ ॥ एरे लाला मूल ते महाव्रत भांगता, वलि बीजा भांगशे च्यार रे

घरकी तो ऋद्धि जाय, लोकमें प्रतीत जाय।
उत्पात बुद्धि जाय, विकल होय ढंग ते॥
सञ्जमका भार जाय, ज्ञानका उपचार जाय।
एते सब जाय एक, स्त्रीयाके प्रसंग ते॥२॥

—:※:—

देख्यांसे चित्त हरे, पाप तो दिलमें धरे।
अष्ट पहर याद करे, वाही की बात है॥
तेह तो लजावे कुल, कुटुम्ब कुं देवे भूल।
नेह नो लगावे नर, नारी नां चाहत है॥
आंटो आयां प्राण छूटे, न्यायकर राज लूंटे।
दुश्मण अनेक उठे, कीर्त्ति उठ जात है॥
कहत हैं मोवतराय, पस्तावोगे बार बार।
परस्त्रीयाके संग ते, ऐसे दुख पात है॥

—:※:—

दीपक लोह बनी वनिता, ज्यां जीव पतंग ज्यों परते। दुःख पावत प्राण गमावत है, वरजे न रहे हट सु जरते। ईण भांत विचक्षण आंखनके, वश होय अनीत नहीं करते। नारी

निकसे धरती नीरखे, धन है धन है। धन है !!! नर ते ॥

दोहा।

चोरी झूठ गुना वली, अधर्म ने अन्याय।
विविध दोष व्यभिचारना, कुकर्ममां कहेवाय ॥१॥
लाज घटे सहु लोकमां, शत्रु ता शिर थाय।
अकाल मृत्यु ऊपजे, जीव कदापी जाय ॥२॥
सद्गुण सघला होय पण, चित्त चाहे व्यभिचार।
जश नव पामे जगतमां, करे लोक धिक्कार ॥३॥
उत्तम बुद्धि न ऊपजे, सूझे न उद्यम सार।
गर्थ गुमावे गांठनो, जार कर्म करनार ॥ ४ ॥
कूप पडी मरवुं भलु, पीवुं भलुं विषपान।
अनेक दुःखनी आपदा, नहिं व्यभिचार समान॥५
नाम बीगाड़े बापनुं, कुलमा धरे कलंक।
टले न कदिये टालतां, ऐ लांछन नो अंक ॥६॥
नाक कपायुं ते कदी, फरी न साजुं थाय।

लांछन लाग्युं ते कदी, जार तणुं नहिं जाय ॥७॥
पाछलथी पस्ताय पण, अन्ते नहिं उपाय ।
पड़ी पटोले भात ते, जीर्ण थतां नव जाय ॥८॥
माणसमां उजले मुखे, बोली शकय न बोल ।
व्यभिचारीनो विश्वमां, तरणा तुल्ये तोल ॥९॥
होय राय के रंक पण, निश्चे बहु निंदाय ।
श्वान तुल्य सहुको गणे, जोवतो प्रेत जपाय॥१०॥

छप्पय छंद ।

नार नरककी खान है, दुर्गन्ध अंग अपार ;
ऐसी उनको देहमें, जैसा कुंड चमार ;
जैसा कुंड चमार, जानकर कैसे जावे ;
उत्तम मनुष्या देह, जानके नरक डूबावे ;
भीखन कनैया भने, उनसे होत हेरानी ;
दुर्गन्ध अंग अपार, नार नरककी खानी ॥

—:०:—

॥अथ रतनकुंवरकी सज्झाय लिख्यते॥

रतनकुंवर गुण आगलोजी, आगल मुखडे रा बोल। सांभलतां रंग वासनाजी, आप्यो जेम तंबोल॥ सोभागी, रतनकुंवर गुणवंत। ए टेर॥ ॥१॥ श्री सेवादेवीजीका नंदवा जी, श्रीमाली कुलचंद। नाथ रीखजीना प्रतिबोधिया जी, रतनकुंवर गुणवंत॥ सो० र०॥ २॥ वनखंड साधु पधारीयाजी, रतनजी वन्दण जाय। वाणी सुणीने वैरागीयाजी, जाण्यो अथिर संसार॥ सो०॥०॥३॥ सोले वरसरा रतनजी जी, आदरयो वरत आचार। देवकन्या सरीखी तजी जी, लेसोंहो संजमभार॥ सो०॥ र०॥ ४॥ सासरे जाय स्त्रीने पुछवाजी, श्रीबाई वरनार। पीयुने साथे मेलो नहींजी, ज्युं राजल नेम कुंवार॥ सो०॥ र०॥ ५॥ श्रीबाईने समजाववाजी, सासरे चाल्या हो स्याम। ओढण चीर लेही करीजी, साथे हो मंत्री अभिराम॥ सो०॥ र०

॥ ६ ॥ रतनजीने देख्या आवताजी, सासुजी नेण नीहाल। भला पधारचा थे पावणाजी, दीनो दुलीचो ढाल। सो० र० ॥ ७ ॥ भिन २ कर सासु पुछीयोजी, क्युं थे पधारचा आज। रतनजी केवे धरम रंगीया जो, हम तुम मिलवारे काज ॥सो० र० ॥८॥ तेड़ो तुमारी ते बालिकाजी, श्रीबाई वरनार। सासर वासो पछे करोजी, मैं लेसां हो संजमभार॥ सो० र० ॥ ९ ॥ घणी सहेलीयांमें खेलतीजी, श्रीबाई प्रमोद। माता बुलाई मंदिरांजी, जाणी हो वात विनोद ॥ सो० र० ॥ १० ॥ संघ छोड़ी सखीयां तणाजी, आई माताजी रे पास। भिन २ करने पूछीयोजी, माता वात प्रकास ॥ सो० र० ॥११॥ माता कहे सुण संदरीजी, ए थारे पीउजी तणो वीचार प्रतिबोधी घर राखजोजी, सुख वीलसो संसार ॥सो० र० ॥१२॥ आई मंदिर आपरेजी, सोचे श्रीवरनार। लीखणवालो भूल गयोजी, क्या भुल्यो कीरतार॥ सो० र० ॥ १३ ॥ रतन

कहे सुण सुंदरीजी, ओ संसार असार । तुम-नाशुं परणाम छे जी, हमे लेसांजी सञ्जमभार ॥ सो० र० ॥ १४ ॥ श्रीबाई केवे कंथने जी, नीठोर वचन नीवार । विना चूक क्यूं परहरो जी, चालोनी मारग विचार ॥ सो० र० ॥१५॥ गुण ओगुण मुझने कहोजी, क्यूं मूंको निरधार। मोटा कुलनी हूं उपनीजी, म्हारी साख भरे संसार ॥ सो० र० ॥ १६ ॥ दिन २ सुख कर मानती जी, म्हारे रतन जीसा भरतार । मोटी आशा मुझने हुंतीजी, अब म्हारे कुण आधार ॥ सो० र० ॥ १७ ॥ रतन कहे सुण सुंदरीजी, ओ संसार असार । लख चोरासी जुंणमें जी, भमीयो अनंतीवार ॥सो० र० ॥१८॥ ये सग-पण आपां सहु कीयाजी, नहीं रयो थिर एक वार । धरम विहुणो प्राणीयोजी, भमीयो नरक मझार ॥ सो० ॥ र० १९ ॥ दश दृष्टांते दोहिलो जी, मानुषनो अवतार । धरम सामग्री पायनेजी म्हारे कुण रुलसी संसार ॥ सो० र० ॥ २० ॥

कीधा सतगुरु जाणनेजी, परणवाना पच्चखाण ।
वेन सरीखी तूं मुज हुवेजी, तो ओढोनी चीर
सुजाण ॥ सो० र० ॥ २१ ॥ सासर वासो पर-
हरोजी, म्हाने बंधवके बतलाय । दो आसीस
सुहामणी जी, म्हाने कुंकुने चोखा बंदाय ॥सो०
र० ॥२२॥ गुणवंता सुणो वालमाजी, म्हाने कांई
मूको निरधार । जो वैराग एहवो हुंतोजी, तो
पेलाही करता विचार ॥ सो० र० ॥ २३ ॥ हम
तुमनी आशा घणीजी, सफल करो गुणवंत ।
इम किम दिक्षा लीजीयेजी, कुंवर सांभलो कंत
॥ सो० र० ॥२४ ॥ मन थिर राखो नाथजी हो,
पोंचो निज आवास । लगन दिवस चंवरी चढो
जी, आवजो धर उल्लास ॥ सो० र० ॥ २५ ॥
लघु वयमें दिक्षा दोहिलीजी, दोहिलो साधु
आचार । लघु वयमें दिक्षा आदरनाजी, दोहि-
लो संजम भार ॥ सो० र० ॥ २६ ॥ सुण सूंदर
सूंदरी तजीजी, नामे जंबुकुमार । ज्युंथे मुझने
जाणजोजी, उत्तर दीनो विचार ॥सो०र०॥२७॥

श्रीबाई कहे कंथने जी, परण्या हो आठुं नार। तेवारे पीछे दिक्षा लही जी, युं करो रतन कुंवार ॥ सो० र० ॥ २८ ॥ एवंतो परण्ये विना जी, लीनो हो संजम भार। ज्युं थे मुजने पण जाण-जोजी, उत्तर दिनो विचार ॥ सो० र० ॥ २९ ॥ श्रीबाई केवे कंथने जी, हुं नहीं रहसुं हो लार। पल्ले लागी पीया तुम तणोजी, जाणें हो जुग संसार ॥सो० ॥ र० ॥३०॥ देवकी नंदण सुहा-मणोजी, नामे हो गजसुखमाल। देव कन्या सरीखी तजी जी,, लीधो संयम भार ॥ सो०। र० ॥ ३१ ॥ बामण केरी बालकाजी. ते तो या-दव राव। सरखी जोड़ी नहीं मिलीजी, किम-कर मिलसी यो न्याव ॥ सो० र० ॥ ३२ ॥ या-दवपति सुहामणोजी, नामे हो नेमकुमार। तेल-चढ़ी राजुल तजीजी, लीधो संजम भार ॥सो० र० ॥ ३३ ॥ श्री बाई इम वीनवेजी, जीत्या ह-मारा स्याम। किण रुवनो घरमें रहूं जी, म्हाने दोय पग बतावो ठाम ॥ सो० ॥ र० ॥ ३४ ॥

हमारे लिछमी अति घणीजी, स्यापुं हो द्रव्य अपार । माइताने वले हुं केवस्युंजी, थांरी करसी हो साल संभार ॥ सो० र० ॥ ३५ ॥ आगे बात ए हुई नहींजी, तीन कालमें नांय । श्रीबाई केवे तुमे वीनवुंजी, माने कुण राखे घरमांय ॥ ॥ सो० र० ॥ ३६ ॥ कुंवारी लागुं पीया खांडसीरे, परणी कडवो कंसार । पछे लागुं पीया नींबसीरे, बेठी घरर मझार ॥ श्री० र० ॥३७॥ जो तुम पीहरमें रहोतो, स्योपुं द्रव्य अपार । दान शीयल तप भावना जी, लावो लीजो जी सार ॥ सो० र० ॥ ३८ ॥ पोहरीय पीया जो रहूंजी, जोउं आणीरी वाट । लोक चढावे दोषण घणांजी, भुंडेभुंडाजी घाट ॥ सो० र० ॥ ३९ ॥ तुंतो कुंवारी बालिकाजी, सो घर सो भरतार । पोंच हूवे तो दिक्षा लीजिये जी, कर दो खेवो पार ॥ सो० ॥ र० ॥ ४० ॥ श्रीबाई इम विनवे जी, कांई कही एहवी बात । रतन विना सहु माहरे जी, सब बंधव और तात ॥ सो० र० ॥ ४१॥

जो थे रहसो संसारमेंजी, तो हूं छुं तांहरी नार । जो थे संजम आदरोजी, तो हुं माहासतीयां री लार ॥ सो० ॥ र० ॥ ४२ ॥ मानसरवररो हंसलो जी, नगर बारे किम जाय। दान बीजोरा मेवा तजीजी, म्हारे नींबोली कुण खाय ॥ सो० र०॥ ॥४३॥ अमृत वचन श्री बाई राजी, सांभलीया रतनकुंवार । दंपती सञ्जम आदरचोजी, जाण्यो अथिर संसार ॥ सो० ॥ र० ॥ ४४ ॥ नेमजिणंदरी ओपमाजी, श्रीरतन कुंवर गुणसार। श्री राजल राणी री ओपमानी, श्रीबाई गुणधार ॥ सो० ॥ र० ॥ ४५ ॥ इबरत छोड़ संजम आदरचोजी, दुखमी आरे माय। तोपण भारी करमा जीवनेजी, साधु नहीं आवेदाय ॥सो०र० ॥४६॥ पुरा पुण्य ज्यांरा खुलीयाजी, सेव्या साधु निगरंथ। क्रोध कषाय दूरा मूकनें जी, पायो मुक्ति रो पंथ ॥ सो० ॥ र०॥ ४७ ॥ सोलमी ढाल सुहामणी जी, श्रीरतन गुण अमोल । सांभलता रङ्ग उपजे जी, आप्यो जेम तंबोल ॥ सो० ॥ र० ॥ ४८ ॥

॥ इति श्रीरतनकुंवर की सज्झाय समाप्तम् ॥

शब्दार्थ—

दुलीचो = गलेचो
कंत = कंथ
स्यापुं = सोंपु (देउं)

दंपती = स्त्री भरतार
इवरत = अव्रत

अथ तिलोक संदरी रो व्याख्यान लिख्यते

दोहा ।

विहरमान वीसे नमुं, जयवंता जगदीश। अति-
मयवंत अनंत गुण, तारक विश्वा वीस ॥ १ ॥
दान शीयल तप भावना, इण जुग ए श्रीकार ।
तिरीयानें तिरसो घणा, पांमे भवदधिपार ॥२॥
वरत सहूइ मोटका, शील समो नहीं कोय ।
जे नरनारी पालसी, मुक्ति तणा फल होय ॥३॥
साची तिलोकसुंदरी, राची शीलसु रंग ।
नेह तणा गुण वरणवुं, आणी अधिक उमंग ॥४॥

—:※:—

ढाल पहली

(हमीरीयारी एदेशी)

जंबूद्वीप रा भरतमें, सुदरसणपुर अभिराम सनेही । न्याय गुणे करि निरमलो, अरि मरदन नृप नाम सनेही ॥ १ ॥ शील तणी महिमा सुणो, एक मना नर नार स० । इणभव परभव सुख लहे, वरते जय जयकार स० ॥२॥ शी० ॥ पुफदंत सेठ तिहां वसे, सत्यसिरी नामे नार स० । तेहने सुत दोय दीपता, सागरदत्त चित्रसार स० ॥ ३ ॥ शी० ॥ जोवन वय आयां थकां, सागरदत्तने तिण पुर माय स० । धनवंत सेठ तणी सुता, रूपसुंदरी दी परणाय स०॥४ शी०॥ वसंतपुरी जिनदत्त वसे, धनश्री नार उदार स० । बेटी तिलोकसुंदरी, सा परणी चित्रसार स० ॥ ५ ॥ शी० ॥ सुख भोगवे संसारना, भायांरे घणो प्यार स० । माता पिता

परभव गया, सुत करे घरनी सार स० ॥ ६ शी० ॥ वोपार परदेशमें, बारे वरस करार स० ॥ एक भाइ घरे रहे, एक परदेश मझार स० ॥ ७ ॥ शी० ॥ छोटो भाई परदेशमें, ज्येष्ठ बंधु घरे वसंत स० । लघु भाईनी भारज्या, देखी स्नान करंत स० ॥ ८ ॥ शी० ॥ रूपे अपछरा सारखी, पेखी व्याप्यो काम स० । ए नारी विन भोगव्यां, जावे जनम निकाम स० ॥ ६ ॥ शी० ॥ बसतर गेणा मोकल्या, दासी साथे तेह स० । जेठ पिता सम जाण नें, लीधा हरष धरेह स० ॥१०॥ शी० अत्तर फुलेल सुंखडी, करे काम उदीप स०॥ दासी साथे देईकरो, मोकल्या सती समीप स० ॥ ११ ॥ शी० ॥ सती देख मन चिंतव्यो, जेठ कामी अपार स० । सर्व वस्तु वगायनें, दासीनें दी जझकार स० ॥ १२ ॥ शी० ॥ दासी कह्यो जाय सेठने, वा नहीं माने वयण स० । करि थारी मारी घणी, अरुण करीने नयण स० ॥ १३ ॥ शी० ॥

दोहा।

अरु वरु आइ कहे, चित लाई धर नेह ।
मनचाइ लीला करो, जोबन लावो लेह ॥ १॥
गेणादिक मांगे जिके, हाजर करुं तयार।
हुं छु किंकर ताहरो, तुं मुझ प्राण आधार ॥ २ ॥
जेठ वचन सुण सुंदरी, कीधो कोप करूर।
परणी वंछे पारकी, फिट पागड़में धूड़ ॥ ३ ॥
सती निभंछ्यो जेठनें, रती न मानी कुजात ॥
कथी जाय आरक्षनें, भ्रातवधुनी बात ॥ ४ ॥
रूप प्रशंसा सांभली, कोटवाल तिणवार ॥
सती बोलावी ने कहे, कर मोसुं इकतार ॥५॥
सती नाकार्यो तेहनें ॥ फिटकार्यो सो वार ।
डाकण आल दोहुं देइ, गाडी पुररे बार ॥६॥

ढाल दूसरी ।
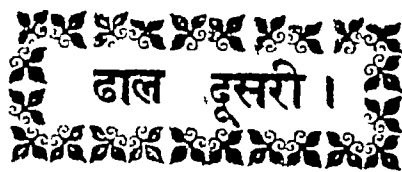
(हिवे राणी पदमावती एदेशी)

तिमिर व्याप्यो रवि आथम्यो, डरावणी हुई रात । कने सखाइ को नहीं, ते सिमरे जगनाथ ॥ १ ॥ मुझ शरणो एक शीलरो, धरती मनरे मांय । क्षुद्र जीव भय ना हुवो, शील तणे सुपसाय ॥ मु० ॥ २ ॥ आगेइ सतीया भणी, पड़िया कष्ट अनेक । अंजणा चनणा द्रौपदी, सीता दवयंती देख ॥ मु० ॥ ३ ॥ ईणा उपसर्ग सुं जो वचुं, तो लेणो मुझ आहार । नहींतर म्हारे आजथी, जावजीव परिहार ॥ मु० ॥ ४ ॥ वलि जेठ आइ कहे, सुख भोगव मुझ साथ । तो हुं ले जाउं घर भणी, सती न मानो वात मु० ॥ ५ ॥ वासी चंपा नगरनो, सेठ हुंतो गुणपाल । मारग वेतो आवियो, दीठी अधगड़ी वाल ॥ मु० ॥ ६ ॥ इचरज पाय जन मोकल्यो,

सती पामी जब त्रास । बाई नाम बोलावतो, हुवो चित हुलास ॥ मु० ॥ ७ ॥ वितक विवरो सांभली, लायो आप रे गेह । धरमण बाई था-पनें, राखे अधिक सनेह ॥ मु० ॥ ८ ॥ कोटवाल ने जेठ ते, गलत कोढीया थाय । घर सुं न्यारा कर दिया, पाप उदे हुवा आय ॥ मु० ॥ ९ ॥ सुखे समाधे सती तिहां, धरती धरम नो ध्यान । तिण पग छेड़े सेठ रे, हुवो पुत्र प्रधान ॥ मु० ॥ १० ॥ सेठ विशेष राजी हुवा, गोद खिलावे बाल । सती शील सरोवर झूलतां, बितो किती-यक काल ॥ मु० ॥ ११ ॥
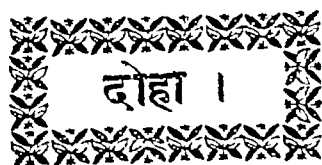
दोहा ।

इक दिन मूरख गुमासते, देखी इणरो रूप ।
कांम फंद मांहे पड्यो, चित्तमें लागी चूंप ॥ १ ॥
हास कितोल करे घणो, सती निभंछ्यो तेह ।
हुं कहिसुं बाबा भणी, तो तुम देसी छेह ॥२॥

तिलोकना ना सुण वचन, चमक्यो चित्त मझार ।
इणने आल देइ करी, काढुं घररे बार ॥ ३ ॥
निरभय सुती देखनें, रूद्र हाडका लाय । सती
आगल बिखेंरने, सेठने बोल्यो आय ॥४॥

ढाल तीसरी
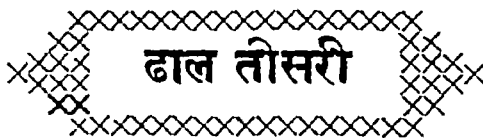
(मोतीड़ांरो गजरो भूली ए देशी)

सुणो सेठ सेणा, मुझ मांनो कहु तुझ वेणा ।
ए डाकण धूतारी मैं तो, परखि रयण मझारी ।
सु० ॥ १ ॥ नीठसे हुवो पूत, एह राख्या होसो
अपूत ॥सु०॥ हु तुमनो भलो चाऊं । तिणथी
ए वात जताऊं ॥२॥ इणामें शंका जाणो कांई ।
तो चालो देउं वताई ॥ सु० ॥ सेठ चिंते मन
मांय । किम लागे पाणी मांहे लाय ॥सु०॥ ३॥
सेठनें सती कने लावे । रुद्र हाड मांस देखावे
॥ सु० ॥ चमक्यो सेठ चित मांई । नारी जात-
री खवर न कांई ॥ सु० ॥ ४ ॥ सेठ कर रह्यो
थागा थोगी, ए नार नहीं घर जोगी ॥सु०॥ रखे

बाल भले भखे आ म्हारो । तो वेगी काढो घर-बारो ॥ सु० ॥ ५ ॥ एतले सती ऊठ जागे । हाड मांस पड्या मुख आगे ॥ सु० ॥ देख आ मनमें विमासे । भावि लिख्यो जिम थासे ॥ सु० ॥ ६ ॥ हिवे सेठ कहे बुलाई । इण घर सुं जावो बाई ॥ सु० ॥ सुण बात हुइ दिलगीर । इणरे नेणा ठलक्या नीर ॥सु० ७॥ तुमसु जोर नहीं तात । थांरा खुसी पणारी बात ॥ सु० ॥ सेठरी छाती भराई । राख्यां रीत रहे नहीं कांई ॥सु०॥ ॥ ८ ॥ सहस मोरां पकड़ाई । सती चाल बाजा-रमें आई ॥ सु० ॥ पूज सबलदासजी कहे सुणो प्यारा । भाई पापसु हुयजो न्यारा ॥ सु० ६ ॥

दोहा ।

खत्री चंपक सेठरे, धरणो दीनो आय ।
मांगे मोरा पांचसे, नहीं इणरे घर मांय ॥१॥
लोकां मिल समझावियो, पिण नहीं माने तेह ।
अवसर देख सती तदा, वदे वचन धर नेह ॥

वाई करने राखो घरे, तो हुं झगड़ो दुं मेट ।
दीनी मोरां पांचसे, ले आयो घर थेट ॥ ३ ॥
सुखे रहे वाई इहां, जपे जिनेश्वर जाप ।
गुमासतो कोढो हुवो, पूरव पाप प्रताप ॥ ४ ॥

ढाल चौथी

(लहरयानी ए देशी)

॥ लखी विणजारो एकदा । आयो इण पुर मांही हो ॥ कांमी मतवालो ॥ करीयांणो विविध प्रकारनो । वेचे खरीदे उछाह हो ॥ कां० ॥ १ ॥ लखी विणजारा रे हुवे । रसोई चंपक गेह हो ॥ कां० ॥ तिलोक सुंदरीनो रूप देखनें । जाग्यो मनमथ तेह हो ॥ कां० २ ॥ विणजारो पूछे सेठ नें । आ तुम घर कुण नार हो ॥ कां० ॥ धरमण वेटो माहरे । कह्यो पूरव विस्तार हो ॥ कां० ॥ ॥३॥ आ नारी आपो मो भणी । वोल्यो विण-जारो एम हो ॥ कां० ॥ ए उपगारण माहरी ।

तुमनें आपुं केम हो ॥ कां० ॥ ४ ॥ छेवट रहे नहीं ताहरे। क्युं खोवे दाम निकाम हो ॥कां०॥ द्रव्य दस सहस आपसुं। सुण लोभ व्याप्यो चित तांम हो ॥ कां० ॥ ५ ॥ चंपक देवण त्यारी हुवो। तरे सती पूछे कर जोड़ हो ॥ कां० ॥ थे मोल लेवो किण कारणे। तद नायक बोले धर कोड हो ॥ कां० ॥ ६ ॥ दूजी वंछना नहीं माहरे। देखी चतुराइ तुझ हाथ हो ॥ कां० ॥ रसोई कारण मोलवुं। ए मुझ मन री बात हो॥कां०॥ ॥ ७ ॥ दांम देइ ले चालियो। विणजारो धर नेह हो ॥ कां० ॥ कृतघन रा पाप सुं। चंपक कोढी हुवो तेह हो ॥ कां० ॥ ८ ॥ आयो दरीयाव ज्याज बेसनें। चाल्यो कितनिक दूर हो ।कां०। एतो विषय रस मोहियो। आयो सती हजूर हो ॥ कां० ॥ ९ ॥ मन मेल तुं मुझ थकी । करो लील विलास हो ॥ कां० ॥ जोबन गमावे क्युं बावली। हुं थारो दासानुदास हो ॥ कां० ॥१०॥ रूप लावण्य लखणे करी। तुं अपछर रे उण-

हार हो ॥ कां० ॥ इन्द्र इंद्राणी री परे। भोगवां सुख श्रीकार हो ॥ कां० ॥ ११ ॥ मान कह्यो तुं माहरो, मतकर जेज लिगार हो कां० ॥ छेह न दाखुं सर्वथा । कर मोसुं इक तार हो ॥ कां० ॥ ॥ १२ ॥

—:❀:—

दोहा

निसुणी वचन सती वदे, धग थारो अवतार ।
मन करनें वंछु नहीं, जो हवे सुर अवतार ॥ १ ॥
तो पिण केड़ मुंके नहीं, सतीय गुणे नवकार ।
खाय उछालो ने पड़ी, वारिधि बीच तिवार ॥ २ ॥
मगर पीठ ऊपर पड़ी, ते जलधि तट जाय ।
कुसले बाहिर नीसरी, नायक कूष्टी थाय ॥ ३ ॥

ढाल पाचवीं

(आवो सुहागण पूरो साथीयो रे, ए देशी

रात पड़िनें रवि आथम्यो रे। बैठी वृक्ष तल आय रे॥ ध्यान धरे नवकारनो रे। दृढ कर मन वच काय रे॥ भाव धरी नें भवि सांभलो रे॥१॥ वृक्ष चढंतो पन्नग देखनें रे। पंखी शब्द कराय रे॥ सती छिछकार्यो दया आणने रे। नाग गयो बिल माय रे॥ भा० ॥२॥ समुद्र किनारे पंखी जायने रे। जड़ीयां लायां तिण वार रे॥ रूप-परावर्त्तन एक करे रे। दुजी मेटे नेत्र विकार रे ॥ भा० ॥ ३ ॥ कोढादि तीजी उपसमे रे ॥ खे खग पड्या आंण पाय रे॥ थे उपगार कियो घणो रे॥ कह्यो कठा लग जाय रे॥ भा० ॥४॥ तुम्भ भक्ति बण आवे नहीं रे। मुम्भ तिर्यंचनी जात रे॥ कृपा करीनें ए लीजिये रे। झूठ म जांणो तिल मात रे ॥ भा० ॥ ५ ॥ ए विध किम जांणो

तुमे रे । थे तिर्यंच ए अज्ञान रे ॥ साधु दर्शण थी सांभल्यो रे । जाति स्मरण ज्ञान रे ॥ भा० ॥ ६ ॥ श्रावक धर्म विराधियो रे । तिणसुं हुवा तिर्यंच रे ॥ ज्ञान प्रमाण गुण एहनो रे । मैं जाण्यो झूठ म रंच रे ॥ भा० ॥ ७ ॥ वेनातट सुरपुर समो रे । इहांथी योजन पचीस रे ॥ उहां पधारो राणी अंधळे रे । प्रजापाल कोढी अवनीस रे ॥ भा० ॥ ८ ॥ चित्रसार पति तांहरो रे । तुमने मिलसे तत्र रे ॥ मांन वचन चाली सती रे । कर चितने एकत्र रे ॥ भा० ॥९॥ जड़ी प्रभावे रूप पुरुषनो रे । कर आइ पुरमाय रे ॥ वृद्ध मालण घर उतर्‌यो रे । वैद्य नो रूप बणाय रे ॥ भा० ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

अनेक जन ताजा कीया, सुण महिमा रा जांन ।
वैद्य भणी बोलावीया, नृप मेले परधान ॥ १ ॥
वैद्य आय नृपने नम्यो, नृप कहे कर मुझ काज ।
परणासुं सुणासुंदरी, दुं वलि आधो राज ॥ २ ॥

वैद्य मांन नृपनो वचन, कर उपचार विसेस।
नृप रांणी ताजा कीया, हरष्या लोक असेस॥३॥

॥ ढाल ॥ ६ ॥

(लसकरीयानी ए देशी)

—:※:—

वैद्य गुणे नृप रिंझीयो हो। राजन जी। दीया रहणने महल। भलांहि पधापद्या हो उपगारी॥ हुवे नाटक मुख आगले हो ॥ रा० ॥ करे मन मांनी सहिल ॥ भ० ॥ १ ॥ करी सगाइ बाइ तणी हो ॥ रा० ॥ चोखे लगन जोवाय ॥ भ०॥ धवल मंगल गावे गोरड़ी हो ॥ रा० ॥ आंण उमंग मन माय ॥ भ० ॥ २ ॥ केसरीयो वनड़ो बण्यो हो ॥ रा० ॥ तुरा किलंगी रसाल ॥ भ०॥ राय जादा जांनी घणा हो ॥ रा० ॥ मानी बड़ा मछराल ॥ भ० ॥ ३ ॥ हाथी घोड़ांरा थाटसुं हो ॥ रा० ॥ तोरण बांधो आय ॥भ०॥ विध सम्भइ साचवी हो ॥ रा० ॥ वनो वनी दीया परणाय

॥ भ० ॥ ४ ॥ जाझो जस लीयो व्याह नो हो ॥ रा० ॥ अर्द्ध राज नृप देह ॥ भ० ॥ रंग महल सुख सेजमें हो ॥ रा० ॥ आयो वनो धर नेह ॥ ॥ भ० ॥ ५ ॥ हंस तणी गति हालती हो सुंदर जी ॥ गुणसुंदरी सझ सिणगार ॥ हरख भर आइ हो सुन्दजो । मदन बाण वरसावती हो ॥ सुं० ॥ आइ हेज धर नार ॥ह०॥ ६॥ गुंघट पट अलगो करी हो ॥ सु० ॥ निरखे भर भर नेण ॥ ह० ॥ प्रेम हृदय उपजावती हो ॥ सु० ॥ थे हंसकर बोलो सेण ॥ निजर भर जोवो हो पिउ प्यारा ॥ भ० ॥ ७ ॥ भलांइ पधार्या महलमें हो ॥ सुं० ॥ करण केल उछरंग । भलाइ पधार्या हो सुन्दरजी । रमण हसण संभोगनो हो ॥सुं०॥ हिवड़ां नहीं छे ढङ्ग ॥ भ० ॥ ८ ॥ देव मनासां निज देसना हो ॥ सुं० ॥ पीछे तुमसुं वात ॥ भ० ॥ वयण सुणी निज कंतना हो ॥ सुं० ॥ पीहर गइ परभात ॥ भ० ॥ ९ ॥ खेले जमाय रायनो हो ॥ सुं० ॥ ले हय गय परवार ॥ भ० ॥

पिण निजरां नहिं पेखीयो हो ॥ सुं० ॥ प्रीतम प्राण आधार ॥ भ० ॥ १० ॥ इम करतां रहतां थकां हो ॥ सुं० ॥ वीतो कीतोयक काल ॥भ०॥ हिवे दंपति मिले हो ॥ सुं० ॥ ते सुणो बात रसाल ॥ ११ ॥

दोहा ।

लघु बंधु लिख भेजीयो, ज्येष्ठ बंधुनें पत्र ।
मरजादा पूरण भई, आवो वेगा अत्र ॥ १ ॥
समाचार पाछो दीयो, नहीं आवणरो ढंग ।
रोग उपनो सोलमो, तिण सुं देह विरंग ॥ २ ॥
दोरा सोरा हि तुमे, आवो धरी उमंग ।
राय जमाई वैद्य है, ताजो करसी अंग ॥ ३ ॥
कोटवाल भाई बिने, चाल्या है तिण वार ।
विचमें मिल्यो गुमासतो, चोथो चंपक सार ॥४॥
लखी विणजारो पांचमो, सहु पिण मिलीया आय।
वेनातट भाई जिहां, डेरो कीनो जाय ॥ ५ ॥

॥ढाल ७॥

(तो पर मुगलमया करे, ए देशी)

लारे लेई गुमासता जी कांइ ॥लारे०॥ सेठ आयो हो, ले करमें भेट राय जमाइ रे आगल। कर जोड़ी हो। आण उभो थेट। सज्जन भलांई पधारीया ॥ आंकडी ॥ १॥ प्रीतम निंजरां पेखीयोजी कांइ प्री०॥ कांइ हरखी हो, आ हिवड़ारे मांय। रोम रोम तन उलस्यो कांइ, आदर हो दे लीयो बुलाय ॥ स० ॥ २ ॥ कर मुजरो भेट मेलनेंजी कांइ ॥ क०॥ कहे मोटा हो तुम गरीब निवाज, थारी छत्र छाया वसां, राज राखो हो तुम्हो म्हारी लाज ॥ स० ॥ ३॥ किण कारण हूवो आवणोजी कांइ ॥ कि० ॥ कांइ पूछे हो मन धरी उमेद। संका काई राखो मती कांइ सुणता हो नहीं पामो खेद ॥ स० ॥ ४ ॥ जे भाखो ते सही करांजी कांइ ॥ जे० ॥ उपगारी हो तुम गणारी खांण, मरजी हुवेतो तेडुं, इहां फुरमावो हो

सो करुं प्रणाम ॥ स० ॥ ५ ॥ नृप कहे रहो किण जायगा जी कांइं ॥ नृ० ॥ देव रमण हो पुरो सहिरते मांय, उहां रेवास छे माहरो, सेठ बोल्यो हो इम सीस नमाय ॥ स० ॥ ६ ॥ आसां जद उण मारगे जी कांई ॥ आ० ॥ तद लेसां हो तुझ बंधव देख, सीख दीधी कर खातरी इण बातरी हो नहीं जेज विसेस ॥स० ॥ ७ ॥ कर असवारी नीसर्या जी कांइं ॥ क० ॥ दिन दूजें हो करण नें सेल, बाग बगीचा जायने पाछा घिरता हो आया इण गेल ॥ स० ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

रायसुता पति आवतो, देखी हरख्यो मन।
सेठ कहे किरपाकरी, आज दिहाड़ो धन ॥१॥

॥ ढाल ॥ ८ ॥

(एक दिवस लङ्कापति, ए देशी)

रथसुं हेठो उतरी। मन माहे उमंग धरी।
हरख भरी आयो दुकाने सेठरी ए ॥ १ ॥ घणा

लोकां वृंदमें, राय जमाई आनंद में, आप बेठो सिंघासण उपरे ए ॥२॥ सेठ दोनु कर जोड़ नें, विनो करी मद मोड़ नें ॥ मो०॥ हाजर मुखने आगले ए ॥३॥ वैद कहे चित्र सारनें, खुसी हो विणज व्योपारमें ॥ व्यो० ॥ खेचल नहीं हे राजरी ए ॥४॥ सेठ कहे महारायजी, खेचल नहीं है कायजी ॥ का० ॥ तुम परसाद सुखीया वसां ए ॥ ५ ॥ मांहो मांहीं वाता करे, देख्यां ही नयण ठरे ॥ न० ॥ प्रेम हीये मावे नहीं ए ॥ ६ ॥ अरज म्हारी मनाइये, मुझ बंधव रोग मिटाइये (गमाइये), कहो तो बोलाउं इण जायगा ए ॥ ७ ॥ भलां बुलाओ इम कह्यो, सेठ मन आनंद भयो। जननें कयो। ततखिण तिहां तेड़ावीया ए ॥ ८ ॥ डीलमें राध लोही झरे, लोक देख सुग्या धरे। आगा करे मांख्या चटका दे रही ए ॥ ९ ॥ पेली निदान कीजिये, पीछे औषध दीजीये ॥ दी० ॥ पूछे उतपत रोगनी ए ॥ १०॥ सेठ बोल्यो इण परे, रोग व्याप्यो किण

तरे ॥ कि० ॥ विध बतावो पाछली ए ॥ ११ ॥ गर्मी कफ वाय बतावीया, वैद रे मन न भावीया ॥ भा० ॥ हम पोथीमें ना लीख्या ए ॥ १२॥ कच पच बात मतां करो, साच हुवे सो उच्चरो ॥ उ० ॥ हम पोथी साची सही ए ॥ १३॥ मूल उतपत बतावसी, तद रोग जावसी ॥ जा० ॥ नहींतर. हम जावां सही ए ॥ १४ ॥ सेठ नयणारुण करी, सांच कहो थे हित धरी ॥ हि० ॥ शरम मांहे किम पड़ो ए ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

खलक लोक मिलीया घणा, कहतां नावे लाज ।
साच कह्यां बिन माहरो, कोई न बने इलाज ॥१॥
सागरदत्त इम चिंतवी, चित्रसार नें तांम । कहे हुं कुलखांपण हुवो, खोइ घरनो मांम ॥ २ ॥

॥ ढाल ९॥

(माल पुरोरांणीजी मारीयो, ए देशी)

मुख पर कपड़ो रालनें । वचन वदे तिण

वार ॥ बंधव मोरा हो तुम नारी रूप देखने ॥ मुझ व्याप्यो मदन विकार ॥ बं० ॥ सागरदत्त इण पर कहे ॥ १ ॥ गहणा कपड़ा आद दे, बसतां मेली रसाल । बं० ॥ उण सती वंछी नहीं, मैं जाय कह्यो कोटवाल ॥ बं० ॥ २ ॥ सा० ॥ कोटवाल पिण चल गयो, बोलावी कहिवाय ॥बं०॥ सुख भोगव तुं मुझ थकी, सती न मानी काय ॥ बं० ॥ ३ ॥ सा० ॥ डाकण आल दोनुं देइ, अध गाडी शहर रे बार ॥बं०॥ पछे मैं हुय गया कोढ़ीया, पाप तणे परकार । बं० ॥ ४ ॥ सा० ॥ गुमासतो कहे तिण नारने, मुझ सेठ लायो निज गेह ॥बं०॥ हूं रूप देखीनें रिंझियो, धुरकारचो नहीं कीयो नेह ॥ बं० ॥ ५ ॥ सा० डाकण आल दीयो तदा, सेठ चमक्यो चित्र मझार ॥ बं० ॥ सहस मोरां देइ करी, काढी घर रे बार ॥ बं० ॥ ६ ॥सा०॥ तिण पापे हुं कोढी हुवो, चटके चंपक बोल्यो वाय ॥ बं० ॥ झगड़ो मेल्यो माहरो, बाइ कहिलायो गेह ॥ बं० ॥ ७॥

सा० ॥ लखी विणजारे लोभ दीयो, मुझ कनासुं ले गयो एह ॥ बं० ॥ हुं कृतघन कोढी हुवो, बिगड़ गई मुझ देह ॥ बं० ॥ ८ ॥ सा० ॥ लखी विणजारो बोलीयो, सती व मोटकी थाय ॥ बं० ॥ मैं वकारी ज्याजमें, तद पड़ी उछालो खाय ॥बं० ॥९॥ सा०॥ तिवारे पछे हुवो कोढीयो, मैं पाप कीया कुपात ॥ बं० ॥ वैद्य कहे साचो कही, पोथी मुजब सब बात ॥बं० ॥१० ॥सा०॥

॥ सोरठा ॥

चित्रसार सुण वेण, दुख व्याप्यो मन में घणो । वा नारी मुझसेण, समुद्र पड़ी सो कद मिले ॥१ ॥ धसक उछालो खाय, पड़ीयो धरणी ऊपरे । सितल पवन ढोलाय, कीयो सचेतन सेठनें ॥ २ ॥

॥ ढाल १० ॥

(इडर आंबा आंबली रे, ए देशी)

वैद्य कहे चित्रसार नें रे, इतनो मोह करो

केम । नारी नेहरे कारणे रे, पुरुष झुरे नहीं एम ॥ चतुर नर ॥ नारी सोच निवार ॥ १ ॥ उवा गइतो जाणदो रे, फेर परणो वर नार । दांम होसी घर ताहरे रे, तो मिलसी नार हजार ॥च० ना० ॥ ॥२॥ वैद्य वयण सुणी करी रे, सेठ वदे इम वाण । रूप लावण गुण आगली रे, उसी फेर मिले कद आंण ॥च०ना०॥ ३ ॥ वैद्य कहे सुणो सेठजी रे, सोच म करो कांय । भागे लिखी जो ताहरे रे, तो मिलसे वाहीज आय ॥च०ना०॥४॥ थे कहो जिम हूं करूं रे, इणां तणा जतन । सेठ कहे जावो आगड़ा रे, बोल्यो इम खांचो मन ॥ च०ना०॥५॥ सिध वैद करुणा आंणने रे, जड़ीयां खोली नीर । उपचार कीयो पांचुं तणो रे, हुवा कंचण वरण शरीर ॥च०ना०॥६॥ राय जमाइ कहे सेठने रे, तुमचो देखावो गेह । सबलदासजी कहे सांभलो रे, आणी अधिक सनेह॥च०ना०॥७॥

॥ सोरठा ॥

सेठने लारे लेह, महल देखवा कारणे ।
राय जमाइ तेह, आयो मन उमंग धरी ॥ १ ॥
छयल महिल में पेठ, सधर कपाट जड़ी करी ।
बारे ऊभो छे सेठ, नारी निज सागे बणी ॥२॥

॥ ढाल ११ ॥

(मोतीदोनी हमारो राजिन्द मोतीदोनी, ए देशी)
ततखिण दीनो पट उघाड़ी, देखे तो अमरी समा नारी। पिउड़ा बलीहारो तुंहारी, पिउड़ा ॥ आंकड़ी ॥ एसो सुपनो मुझने आवे, के कोई इन्द्र जाल दिखावे ॥ पि० ॥ १ ॥ पेठो मर्द ने नीसरी नारी, वदन देखतां सहि मुझ प्यारी ॥ पि० । शुं विमासो कहे इम बाला, थे मुझ प्रीतम प्राण रसाला ॥ पि० ॥२॥ खानाजाद हुं दासी तुमारी, विरह पीड़ मिटावो हमारी ॥पि० ॥ धणी धणीयाणी दोनुं हिल मिलीया, जाणे पयमें पतासा मिलीया ॥ पि० ॥ ३ ॥ हियड़ा

भितर हरख न मावे, ज्युं ससि सायर लहर चढावे ॥ पि० ॥ पुरुष अवस्था किण विध पाई, धुरापेट सुं सरब बताई ॥ पि० ॥ ४ ॥ वेरघणी हुइ राज पधारो, इम कहे हाकमनें हुजदारो ॥ पि० ॥ सा कहे सेठ तणी हुँ नारी, रायपे जाय कहो समाचारी ॥ पि० ॥५॥ इचरज पाय आय राय पासे, वातनो विवरो सरब प्रकासे ॥ पि० ॥ राय कहे जावो उण पासे, अम बेटीनी सी गति थासे ॥ पि० ॥ ६ ॥ बात सुणी बोली इम नार, म्हां दोनांरो इक भरतार ॥पि०॥ रायपे जायने बात जणाई, सेठ बोलाय कर थाप्यो जमाई ॥ पि० ॥ ७ ॥ घणो कुर्व वधारो दीधो, सीलरी बात हूइ प्रसीधो ॥ पि० ॥ तिलोकसुंदरी शीलवंती बाई, इम कहे देव आकास रे मांई ॥पि०॥ ८ ॥ राय-सुता हिव कर सिणगारो, आई पिऊ तणे दर-वारो ॥ पि० ॥ वड़ी कहे आगे मालक हुं ही, अव आधी गादी री मालक तुँही ॥ पि० ॥ ६॥ सुख विलसे प्रीतम विहुं साथे, रंग रलीमें वासर

जाते । ईस खेदो करे कोई नाहीं, संपत दोनां रे मांहो मांही ॥ पि० ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

केइ वरस इहां रह्या, अब मांगे छे सीख ।
देश हमारे जावसां, इहां न लागे ठीक ॥ १ ॥

॥ ढाल १२ ॥

(इम धनी धणनें परचावे ए देशी)

राजंद वयण सुणी मनचिंते, आखर परदेशी जासे रे लो । बाईनें सीख देवे भली परे, जावत सासरे वासे रे लो ॥ धन धन जे निज कारज सारे ॥ १ ॥ पति भक्ता गुण ग्राहक होजे, शीलवंती कुल उजवाले रे लो । विनयवंत सब सुं नमचाले, कुकर्म खाखनुं टाले रे लो ॥ ध० ॥ २ ॥ दान पुन्ये कर रहिजे सूरी, बुरी करे मत किणरी रे लो । सासरो पीहर भलो दिखायां, लोक सोभा करे जिणरी रे लो ॥ध० ॥ ३॥ मात पीता सिखामण दीनी, पिण चालतां हीयो भरी-

जे रे लो । सिरपाव गेणा वेश बहुविध, बाई जमाइ नें दरीजे रे लो ॥ध०॥ ४ ॥ मोरत लगन सुध देखीनें, तुरत प्रयांणो कीधो रे लो । राजादिक पोचायने घिरिया. जाबतो लारे घणो दीधो रे लो ॥ ध० ॥ ५॥ कुसले खेमे निज घर आया, गुणपाल ना गुण घणा जाण्या रे लो । कुटुंब कबीला सेण सगांनें, वस्त्रादिके सनमान्या रे लो ।' ध० ॥ ६ ॥ सुख भोगवतां प्रीतम साथे, दोनु ंइ बेटा जाया रे लो । चित्तवलभनें गुणसुंदर, कंचण वरणी काया रे लो ॥ ध० ॥ ७ ॥ भणी गुणीनें पंडित हुवा, जोबन वयमें आया रे लो । परणाया मोटे ठिकांणे, माणे मन मांनी माया लो ॥ ध० ॥८॥ धरमघोष थिवर पधारया, पुरा पदा वंदन आवे रे लो । चित्रसार सुंदर बिहुं आगे, मुनिवर धर्म सुणावे रे लो ॥ ध० ॥ ९ ॥ ए संसार असार सुपन जिम, विणसतां वार न लागे र लो । आउ इथर जल ओस बिंदु सम, जल दाई जोवन जावे रे लो ॥ ध० ॥ १०

॥ दस दृष्टांते नरभव दुर्लभ, पांमीने मत हारो रे लो । विषय कषाय तृष्णा लोभ, विकथा पाप निवारो रे लो ॥ ध० ॥ ११ ॥ सुण उपदेश वैराग मन आंणी, चित्रसार नें दोनुं नारी रे लो । घररो भार सुंपी निज सुत नें, लीधो संयम सुखकारी रे लो ॥ ध० ॥ १२ ॥ पंच आचार महाव्रत पाले, दोषण सगलाई टाले रे लो । तप जप संयम सुध आराधे, आतम गुण उजवाले रे लो ॥ ध० ॥ १३ ॥ कर अण-सण उपना देवलोके, महर्द्धिक पदवी पाई रे लो । लहि नरभव नें कर्म खपावी, मुगति जासी मुनिराई रे लो ॥ ध० ॥ १४ ॥ शील उपदेश थी ए विस्तारयो, पूज सबलदासजी चित्त लायो रे लो । ओछो इधको आयो हुवे तो, मिच्छामि दुक्कड़ं थायो रे लो ॥ ध० ॥ १५ ॥ अष्टादस सो बाणवे वरसे, कीयो फलवधी चोमासो रे लो । शीलरी महिमा सुणे सुणावे, जिण लील विलासो रे लो ॥ध० ॥ १६ ॥

॥ इति श्रीतिलोकसुंदरी रो व्याख्यान समाप्तम् ॥

॥ शब्दार्थ ॥

सा परणी = वा परणी
हरष धरेह = हरषसहीत
उदीप = जाग्रत
अरूण = लाल
किंकर = चाकर
निर्भछ्यो = फिटकार्यो
आरक्ष = कोटवाल
इकतार = मेल
दोहुं = दोनुं
सखाइ = साथी
खुद्र = दुष्ट
सुपसाय = भले.प्रसाद
सतीयाभणो = सतीयांनें
बाल = (बाला) स्त्री
विवरो = वात (वारता)
तिलोकना = तिलोकसुंदरी
विमासे = सोचे
विने = दोय
निदान = चिकित्सा
तद = तेवारे
नेणरूण = लाल नेतर (नेणअरूण)
ठलक्या = ढलक्या
वारिधि = समुद्र
जलधि = समुद्र
नायक = वणजारो (मालक)
पन्नग = सरप (नाग)
खग = पंखी
रंच = तुछ
प्रजापाल = राजा(प्रजापालनेवालो
वेनातट = एक नगरको नाम
तत्र = उस जागा
असेस = सगला
मछराला = मगरूरी
सहुइ साचवी = सगली करी
मदनवाण = कामदेव रो बांण
रिदय = हृदय
दंपति = स्त्री भरतार
अत्र = अठे
वृंदमें = साथमें

नावेलाज = न आवे लाज

वदे = कहे

वरनार = परधान नार (स्त्री)

तुमचो = तमारो

गह = घर

सागे = सागी

शुं = क्या

पयमें = दुधमें

खानाजाद = खाविंद

ससि = चन्द्रमां

हुजदारो = होदेदार

अम = म्हारी

सी गति = कीसगति

प्रयाणो = रवानो

महर्द्धिक = मोटी रिद्धिरो देव

—:❀:—

अथ विजयसेठ विजयासेठाणी रो चोढालीयो लिख्यते ।

॥ दोहा ॥

आदिनाथ आदीसरो, सकल विदारण कर्म ।
उपगारी भव धारणी, कीयो च्यार प्रकारे धर्म ॥१॥
दान शील तप भावना, इण विना मुक्ति नहीं होय ।
तो पिण सर्व वरत देखलो, शील समो नहीं कोय
॥२॥शील भांगा भांगे सहू, केवे श्रीजिनचन्द ।
शीलवन्त पुरुषने, सेवे सुरनर इन्द ॥ ३ ॥
जस कीरति फैली घणी, जो सोइ वरतमें लीन ।
जो सुख चावो जीवरो, सुध मन पाले शील ॥४॥
विजय कुंवर विजया भणी, शील पाल्यो खड़गधार,
तेह तणां गुण लेखवुं, लिखत कथा अनुसार ॥५॥
नवसर कीज्यो सारी छवा, पर नारी पचखाणे ।
पांच परव तिथि आखड़ी, यथाशक्ति पचखाणे ॥६॥
भर जोबन चित्त जोगमें, ज्यांरे नारी पास ।

बालब्रह्मचारी तिय जोगमें, दुकर दुकर परकास ॥ ७ ॥

॥ ढाल १ ॥

श्री मंदर साहिब विनउं,
तथा दृढ समझी नर थोड़ला । एदेशी ॥

जंबुद्वीपना भरत में, दिखण कछ देशो जी । नगर कुसूंबी तिहां वसै, अमरापद लव लेसोजी ॥१॥ शील तणी महिमा सुणो, ॥ धनो सेठ तिहां वसै, ज्यांरे विजय कुमारो जी । रूप कला गुण आगला, जोवन में हुंसीयारो जी ॥ शी० ॥२॥ इण अवसर मुनि पांगुरया, सुमत गुपत प्रतिपालो जी । आप तीरे पर तारणै, लोक कहे धन धनो जी ॥ शी० ॥ ३ ॥ लोक चल्या मुनि बहू वांदवा, जेमें विजय कुंवारोजी । धर्मकथा मुनिवर केवै, ओ संसार असारो जी ॥ शी० ॥ ४ ॥ जनम जरा दुख मरणानां, केवतां नहीं आवै पारो जी । दुर्लभ नरभव पावीयो, चेतो

सब नर नारो जी ॥ शी० ॥ ५ ॥ उतकृष्टो बंध कर्मरो, जेमें विषय विकारो जी । नव लख सन्नी मिनख में, श्रीजिन कहीयो सिंहारो जी ॥ शी० ॥ ६ ॥ दोष अनेक इण जोगसुं, परनारी बहु दुःख खांनो जी । फल किंपाकनी ओपमा, इम भाख्यो भगवन्तो जी ॥ शी० ॥ ७ ॥ इम सुणीने बहु थरहरया, विजय कुंवर जोडया हाथोजी । थे मुनि संजम ले रह्या, हु समर्थ नहीं कृपा नाथो जी ॥ शी० ॥ ८ ॥ जावजीव पर-नार रा, मने मुनि पच्चखाणो जी । स्वदारारा वले जाणजों, कृष्ण पख रा मनें त्यागो जी ॥ शी० ॥ ९ ॥ दुक्कर काम कंवर कीयो, मुनिवर करगया व्यारो जी । राम कहे धन शीयलनें, जो पाले नर नारो जी ॥ शी० ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

तिण नगरी मांहे वसे, ओर सेठ धनसार ।
विजया सुन्दरी तेहनी, अदभुत रूप उदार ॥ १ ॥
सुण चतुराई बहुलज्यो, चोसठ कला भंडार ।

भर जोबने आइ तदा, साबी विजय कुंवार ॥२॥
आरम कारम सहुकरया, वीहाव कीयो तिणवार।
जैसी विजया सुंदरी, जैसा विजय कुंवार ॥३॥

॥ ढाल ॥ २ ॥

(॥ भवदेवे जागी मोहणी ॥ एहनी देशी ॥)
सज सोलै सिणगार, भला जी कांइ आय उभी
हो रंग महेल मझार। नयण वयण स्त्रीया मोहणी,
आय उभा हो श्रीविजय कुमार ॥ १ ॥ सुण-
ज्योजी शील सुहामणो ॥ ए आंकड़ी ॥ कंत कहे
भले आवीया, दिन तीनज हो नहीं आवणजोग।
स्यु कारण कहे सुन्दरी, इण अवसर हो किम
बरजो छो आज ॥ सु० ॥ २ ॥ कृष्ण पक्ष व्रत
मैं लीया, इम सुणी हो आ थइरे उदास। सुकल
पक्ष व्रत मैं लीया, दुजी परणों हो मांडो घरवास
॥ सु० ॥३॥ विजय कुंवर कहे हे सुन्दरी, सेजे
मिटियौ हो अनर्थनो मूल। जावजीव व्रत पालसां,
नर मुरख हो रह्या छे भूल ॥ सु० ॥ ४ ॥ काम
भोग बहुभोगीया, बले भोगवीया हो अनन्ती-

वार । तोहीयन तृप्त हुवो जीवड़ो, ईम भाषे हो श्री विजयकुंवार ॥ स० ॥५॥ कहे प्यारी सुणो प्रीतमजी, किम रहसी हो आ छांनी बात । चवड़े हुयां संजम लेसां, पछै करस्यां हो कर्मारो सिंहार ॥ सु० ॥६॥ करै समायिक पोसा भेला, सुवे हो एक सेज मझार । जो हुवे भगनी भ्रातनी, शीयल पाले हो खांड़ानी धार ॥ सु० ॥७॥ मन वचन काया करी, नहीं व्यापेहो कदे काम विकार । सार जांणे जिन धर्मनी, और जांणे हो सहु अथिर संसार ॥ सु० ॥ ८ ॥ नहीं रुचे पुद्-गल ऊपरे, ज्यांरो लेखहो जावे जमार, राम कहे ढाल दुसरी, धन धन हो पाले ब्रह्मचार ॥ सु० ॥ ९ ॥

॥ दोहा ॥

धर्म ध्यांन करतां थकां, दुवादस वरसज थाय ।
कुंकर वात प्रगट हुवे, ते सुणजो चितलाय ॥१॥
दाघन लिछमी भागतां, दाता सूर समान ।
इतना छाना नहीं रहे, विधकर कवि प्रकास ॥२॥

॥ ढाल ॥ ३ ॥

जलाल डेरा थारां नीरखणने हुं आइहो, मांरी जोड़ो राजलाल, डेरा थांरां नीरखण आइ हो, जलाल ए देशी ॥

तिण अवसर, तिणकाल दक्षिण दिस मांहि हो, सुखकारी मुनिराज, विमल केवली नामे मुनिवर सोभै हो॥ जिणंद० ॥ १ ॥ चंपापुरी रे बागमें आय उतरीयाहो, सुखकारी मुनिराज, बहु नर नारी मुनि बांदण, परवरीया हो ॥ जिणंद० ॥ २ ॥ ओ संसार असार मुनि दिखलावे हो, सुखकारी मुनिराज, तन धन जोवन जावतां, बार न लागे हो॥जिणंद० ॥३॥ मात पिता सुत भामणी, संग नहीं चाले हो सुखकारी जिनराज, सब संग छोडीने चेतन परभव जासी हो ॥जिणंद० ॥४॥ विषय विषाद प्रमादमें, नरभव हारे हो ॥ सु० ॥ मुरख चेतन रत्न अमोलख हार्यो हो ॥ जि० ॥ ५ ॥ इत्यादिक मुनि, धर्म देशना दीधी हो ॥सु०॥ सांभल

सुरता इमरत रसकर पीवे हो ॥ जिणंद० ॥६ ॥ जिणदास श्रावक, विनवे सीस नमाइ हो, सुख· कारी मुनिराय, श्रो प्रभुजी माने रयण सुपनो पायो हो ॥ जि० ॥ ७ ॥ सहस चोरासी मास-खमण मुनिराया हो ॥ सु० ॥ में प्रतिलाभ्या निरदोषण मुनि आया हो ॥ जि० ॥ ८ ॥ यांने सुं फल, दाखो कृपा करने हो ॥ सु० ॥ दाखे मुनिवर सेठ सुणो चित धरने हो ॥ जि० ॥ ९ ॥ नगर कसुंबी विजयकुंवर गुणधारी हो, ॥मु०॥ तीन करण जोगसुं दंपति बाल ब्रह्मचारी हो ॥ जि० ॥ १० ॥ राम कहे धन शील पाले नर नारी हो ॥ सु० ॥ धन धन तेहनी हुं जाउं बलिहारी हो ॥ जि० ॥ ११ ॥

दोहा।

एकी सिज्या बेहु जणा, शील पाल्यौ खड्ग-धार। तेहतणा गुण वरणाउं, लिखत कथा अनु-सार ॥१॥ चरण सरूपी महाउत्तम, ज्ञानी किया गुण ग्राम। सब कुं सुण इचरज थयो, सबकुं

थयो बिसराम ॥ २ ॥ जिनदत्त मनमें चिंतवे, जाय करूं दरसन। तोय मिलियां संजम लेवसो- ज्ञानी कीया परसन ॥ ३ ॥

ढाल चौथी ।

घोड़ी रो तन देखतां हो भवियण, घोड़ो चंचल थाय । एदेशी

जिनदत्त मुनिवर वांदवा हो, भवियण नगर कसुंबी जाय । बहु परवारे परिवरया हो, भवि- यण दरसण री मनमांय । धन धन तेहने हो भवियण जे शीलपाले नरनार ॥१॥ नगर कसुंबी रे बागमें हो भवियण, सेठजी डेरा कराय । विजयकुंवरजी रे तात सुं हो ॥ भ० ॥ मीलीया हरख धराय ॥ ध० ॥ २ ॥ स्युं कारण पधारिया हो ॥ भ० ॥ सेठजी दाखो कारज राज । धर्म सगपण आवीया हो सेठजी, तुम सुत दरसण काज ॥ धन० ॥ ३ ॥ विमल केवली गुणकीया

हो ॥ भ० ॥ बाल ब्रह्मचारी एह । मुज मनमें दरसण वसे हो, ज्युं कंकू चावे मेह ॥धन• ॥४॥ सेठजी सुण विश्रांमें थया हो ॥ भ० ॥ लीनो कुंवर बुलाय । कीसी भांत सोगन लीया हो, कंवरजी स्युं थांरे मनमांय ॥ धन० ॥ ५ ॥ हाथ जोड़ कंवर केवे हो, तातजी मैं लीनो अबि-गरो धार । अनवतदीजे मो भणी हो, तातजी लेसु सं जम भार ॥ धन० ॥६॥ तात केवे नंदण सुणो हो कंवरजी, कवन मुनिरो आचार। कायर आगल किम रेवे हो, कंवरजी मेरु जितनो भार ॥ धन० ॥ ७ ॥ लाख प्रकारे नहीं रेवुं हो तात-जी, सं जम सुखदातार । वैरागी तो किम रेवे हो कंवरजी, लीनो सं जमभार ॥ धन० ॥ ८ ॥ विजयाकुंवरी पिण लियो हो भवियण, साथे सं जम जान । तप जप खप कीरीया करीहो ॥ भ० ॥ पाम्या केवल ज्ञान ॥ धन० ॥ ६ ॥ बालब्रह्मचारी विरला हुवा हो ॥ भ० ॥ सुणीये बालगोपाल । कर्म खपाय मुक्ते गया हो ॥भ०॥

प्रथम तिर्थंकर वार ॥ धन धन तेहनें हो भवि-यण, जे शील पाले नरनार ॥१०॥ समत अठारे दशरे हो ॥ भवि० ॥ नागोर सेखेकाल । फागुण सुदपुनम दिने हो ॥ भ० ॥ जोड़ीजुक्त सुं ढ़ाल ॥ धन धन तेहनें हो भवियण जे शील पाले ब्रह्मचार ॥११॥ सांमी बृधिचन्दजीरे प्रसाद सुं हो ॥भ०॥ रामचंदजी जोड़ बनाय। इधको ओछो जे कह्यो हो ॥भ०॥ मिच्छामि दुक्कडं मोय ॥ धन धन तेहने हो भवियण जे पाले ब्रह्मचार ॥ १२ ॥

इति विजयसेठ विजया सेठाणी रो,चोढ़ालीयो समाप्तम् ।

॥ शील विषय प्रस्ताविक श्लोक ॥

सीलं न हु खंडिज्जइ, न सव्वं सिज्झइ समं कुसीलेहिं । गुरुवयणं न खलिज्जइ, जइ नज्झइ धम्मपरमत्थो ॥

शील नहि खंडनीयं, न संवसनीयं समं कुशीलैः ।
गुरुवचनं न खलनीयं, यतिना ज्ञेयो धर्मपरमार्थः ॥

अर्थ—शीलव्रतको निश्चय करके खंडित न करना चाहिये, कुशीलीयाके साथ वास न करना चाहिये याने संगत न करनी चाहिये, और गुरु वचन का उल्लङ्घन न करना चाहिये, इस रीतिसे धर्मका परमार्थ है, ऐसा यति पुरुषोंनें जाना है।

प्राणभूतं चारित्रस्य, परब्रह्मैक कारणम् ।
समाचरन् ब्रह्मचर्यं, पूजितैरपि पूज्यते ॥ १ ॥

अर्थ—ब्रह्मचर्य देश चारित्र तथा सर्व चारित्रका प्राणभूत है, और मोक्षका अद्वितीय कारण है, इसलिये जो पुरुष इसको पालन करते हैं वे पूज्योंके भी पूज्य है अर्थात् वे सुर असुर, मनुष्यपति, चक्रवर्ती आदिके भी वन्दनीय हैं, यथा सूत्र श्री उत्तराध्ययन अध्ययन १६, गाथा १६

देवदाणवगन्धव्वा, जक्खरक्खसकिन्नरा ॥
बम्भयारिं नमंसंति, दुक्करं जे करंति ते ॥ १ ॥

अर्थ---जो दुष्कर ब्रह्मचर्य व्रतको धारण करते हैं उनको देव, दानव, गन्धर्व यक्ष, राक्षस किन्नरादि भी नमस्कार करते हैं।

मेहुणसन्नारूढो, नवलक्ख हणेइ सुहम-जीवाणं। इअ आगमवयणाउ, हिंसा जीवाण-मिह पढ़मा ॥ १ ॥

मैथुनसंज्ञारूढो, नवलक्षान् हन्ति सूक्ष्म-जीवानां। इत्यागमवचनाद्, हिंसा जीवानां इह प्रथमा ॥१॥

अर्थ—मैथुन संज्ञापर आरूढ़ हुया हुवा पुरुष सूक्ष्म जीवोंकी नव लाख संख्याको नाश करता है, इस प्रकार सिद्धान्तके वचनसे यह लोकमें जो शीलव्रतका भंग है, वही जीवोंकी प्रथम याने मुख्य हिंसा कहलाती है।

लच्छी जसं पयावो, माहप्पमरोगया गुणसमिद्धी। सयलसमीहियसिद्धी, सीलाउ इह भवे वि भवे ॥ १ ॥ परलोए वि हु नरसुर, समिद्धिसुव भुंजिऊण सीलभरा। तिहुअणपणमियचरणा अरिणा पावंति सिद्धि सुहं ॥ २॥ युग्मम् ॥

लक्ष्मीः यशः प्रतापः माहात्म्यं आरोग्यता

गुणसमृद्धिः सकलसमीहितसिद्धिः शीलात् इह भवेऽपि भवेत्। परलोकेऽपि खलु नरसुर समृद्धिं उपभुज्य शीलभराः त्रिभुवन प्रणमित चरणाः अरिणा प्राप्नुवन्ति सिद्धिसुखम्।

अर्थ—शीलसे अर्थात् शील पालनेसे इस भवमें भी लक्ष्मी, यश, प्रताप महात्म्य, आरोग्यता याने आरोग्यपना गुणोंकी. समृद्धि और सव अच्छे इच्छित कार्योंकी सिद्धि होती है, वैसे ही परलोकमें भी निश्चय करके तीन भुवनके लोकोंने जिनके चरन कमलको नमस्कार किया है ऐसे और कर्म रूप शत्रुसे रहित हुये हुवे ऐसा शीलव्रत को धारन करने वाले पुरुषों मनुष्यों और देवताओंकी समृद्धिको भोगकर मोक्ष सुखको पाते हैं।

सहमाना महादुःखं, परस्त्रीभोगलालसाः।
पश्चात् पूर्वकृतैर्घोरैः कर्मभिर्नर्कवासिनः॥

अर्थ—दूसरेकी स्त्री को भोग करनेकी इच्छावाला पुरुष पहले बहुत दुःखको सहता है, पहलेके किये हुए घोर कर्मोंसे पीछे नरकमें वास करता है।

दर्शने हरते प्राणान्, स्पर्शने हरते बलम्॥
मैथुने हरते कायं, स्त्री हि प्रत्यक्षराक्षसी॥१॥

निश्चय स्त्री प्रत्यक्ष राक्षसी है, देखने से प्राणों को हरती है, छूजाने पर बलको हरती हैं और भोग करने पर शरीर को हरती है।

जइ तं कहिसि भावं, जाजा दच्छसि नारि उ। वायाइद्धुव्व हढो, अच्छिअप्पा भविस्ससि॥

यदि त्वं करिष्यसि भावं, या या द्रक्ष्यसि नारीः। वातोद्धत इव वृक्षः, अस्थिरात्मा भविष्यसि॥

हे प्राणी! तूं जिस जिस स्त्रियों को देखेगा उन्हों पर जो तूं भाव करेगा तो पवन से हिलते हुए वृक्षके तरह चञ्चल आत्मा वाला होगा।

शीलादेव भवन्ति मानवमरुत्संपत्तयः पत्तयः,
शीलादेव भुवि भ्रमन्ति शशभृद्विस्फूतयः कीर्त्तयः।
शीलादेव पतन्ति पादपुरतः सच्छक्तयः शक्तयः,
शीलादेव पुनन्ति पाणिपुटकं सर्वर्द्धयः सिद्धयः॥

शीलसे ही मनुष्य और देवता सम्बन्धी सम्पत्तियां अनुचर वगैरे मिलते हैं। शीलसे ही चन्द्रमा की तरह चमकती हुई कीर्त्तियां पृथ्वीपर फैलती हैं, शीलसे ही उत्तम शक्तियां आकर पैरमें पड़ती हैं, शीलसे ही सब ऋद्धियां सिद्धियां हस्त पुटको पवित्र करती हैं [हाथमें आती है]।

वाल्लभ्यं वितनोति यच्छति यशः पुष्णाति पुण्यप्रथां. सौन्दर्यं सृजति प्रभां प्रथयति श्रेयः श्रियं सिञ्चति । प्रीणाति प्रभुतां धिनोति च धृतिं सूते सुरौकः स्थितिं, कैवल्यं करसात्करोति सुभगं शीलं नृणां शीलतम् ॥

अच्छी तरह पालन किया हुवा शील प्रेमको फैलाता है, कीर्त्ति को देता है, पुण्य के प्रथाको पुष्ट करता है, सुन्दरता देता है, प्रभा का प्रकाश करता है, कल्याणकी शोभाको सिंचता है, ऐश्वर्य को पूर्ण करता है, धैर्य देता है, देवलोककी स्थिति देता है. और मोक्ष को हस्तगत कर देता है [हाथमें देता है] ॥

॥ अध्यात्मकल्पद्रुमसे उद्धृत ॥

मुह्यसि प्रणयचारुगिरासु, प्रीतितः प्रणयिनीषु कृतिन् ! किम् । किं न वेत्सि पततां भववार्द्धौ, ता नृणां खलु शिलागलबद्धाः ॥१॥

हे आत्मन् ! स्नेह करके मनोहर है वाणी जिन्होंकी ऐसी स्त्रियोंमें प्रेमसे तू क्यों मोहित होता है ? संसार रूपी समुद्रमें गिरते हुए मनुष्योंको स्त्रियां गलेमें बंधी हुई शिला की तरह हैं, ऐसा क्यों नहीं जानता ? ॥ १ ॥

चर्म्मास्थिमज्जांत्रवसास्त्रमांसा-मेध्याद्यशुच्यस्थिरपुद्गलानाम्। स्त्रीदेहपिंडाकृतिसंस्थितेषु, स्कंधेषु किं पश्यसि रम्यमात्मन्!॥ २॥

हे आत्मन्! चमड़ी, हड्डी, चरवी, आँतड़ी, पांसली, मेद, रूधिर, मांस, विष्ठा और आदि शब्द से मूत्र कफ इत्यादिकोंसे अशुद्ध और क्षण विनाशी पुद्गलों से बना हुआ जो स्त्रीका शरीर, उसमें तूँ क्या सुंदरता देखता है?॥ २॥

विलोक्य दूरस्थममेध्यमल्पं, जुगुप्ससे मोटितनासिकस्त्वम्। भृतेषु तेनैव विमूढ! योषावपुष्षु तत्किं कुरुषेऽभिलाषम्?॥ ३॥

हे आत्मन्! किंचित् भी विष्ठादिक देखनेसे नाक को मोड़कर तूँ घृणा करता है, तो हे मूर्ख! विष्ठादिकसे ही भरा हुआ जो स्त्रियों का शरीर उसमें तूँ क्यों अभिलाषा करता है? ॥३॥

अमेध्यमांसास्त्रवसात्मकानि, नारीशरीराणि निषेवमाणाः। इहाप्यपत्यद्रविणादिचिंता-तापं परत्रेप्रति दुर्गतिश्च॥ ४॥

उपरोक्त विष्ठा मांस रूधिर मेदादिकों से ही बना हुआ जो स्त्रियोंका शरीर उसको सेवनेवाले जो मनुष्य, वे इस लोकमें सन्तान और धन इत्यादिक के सबब से दुःख भोगते हैं और पर लोकमें भी दुःख भोगते हैं और दुर्गति में जाते हैं॥ ४॥

अंगेषु येषु परिमुह्यसि कामिनीनां, चेतः प्रसीद विश च क्षणमंतरेषाम् । सम्यक् समीक्ष्य विरमाशुचिपिंडकेभ्यस्तेभ्यश्च शुच्यशुचिवस्तुविचारमिच्छत् ॥ ५ ॥

मनकी प्रसन्ना पूर्वक जो मनुष्य स्त्रियोंके शरीरमें मोहित होता है उस को उचित है की– यदि तूं उसमे एक क्षण भर प्रवेश कर और सूक्ष्म दृष्टिसे देखकर उसका भली प्रकार स्वरूपको शोच कर शुद्ध और अशुद्ध इन दोनों वस्तुओंके विचार को चाहता हो तो जो २ स्त्रियोंके अंग हैं वे सब अशुचिके ही पिण्डके राशि हैं उससे तूं अलग हो ॥ ५ ॥

विमुह्यसि स्मेरदृशः सुमुख्या, मुखेक्षणा दीन्यभिवीक्षमाणः । समीक्षसे नो नरकेषु तेषु, मोहोद्भवा भाविकदर्थनास्ताः ॥ ६ ॥

हे आत्मन् ! तूं सुन्दर मुखवाली और विकसित आंखवाली स्त्रीके मुख और नेत्र आदि शब्दसे स्तन विगेरा को प्रेमसे देखता हुआ मोहित होता है, लेकिन महा दुःखमय नरक के विषे मोहसे उत्पन्न हुई ऐसी जो आगमी पीड़ा उसको तूं क्यों नहीं सोचता ? ॥ ६ ॥

अमेध्यभस्त्रा बहुरंध्रनिर्यन्मलाविलोद्यत्कृमि-

जालकीर्णा। चापल्यमायानृतवंचिका स्त्री, सं-
स्कारमोहान्नरकायभुक्ता ॥ ७॥

विष्ठादिकों से भरी हुई धमनी की तरह और बहुत छिद्रोंसे (१२ द्वारों से) वहते हुए विष्ठादिक अशुद्ध पुद्गलों से मलिन और योनिद्वारा पैदा होते हुए सूक्ष्म कीड़ादिकों से युक्त, और च-पलता कपटाई असत्य वचन से पुरुषों को ठगने वाली, ऐसी जो स्त्री वह स्नान तिलक आभूषणादिकों से पैदा हुआ जो मोह तिस से भोगी हुई नरक के लिए होवै॥ ७ ॥

निर्भूमिर्विषकंदली गतदरी व्याघ्री निराह्वो
महा-व्याधिर्मृत्युरकारणश्च ललनाऽनभ्रा च वज्रा-
शनिः। बंधुस्नेहविघातसाहसमृषावादादिसंता-
पभूः, प्रत्यक्षापि च राक्षसीति बिरुदैः ख्याताऽऽ-
गमे त्यजताम् ॥ ८ ॥

उपरोक्त वह स्त्री विना भूमिकी विषके नया अङ्कुरकी तरह है और विना गुफा की वाघिनी के समान है, विना नामकी वडी व्या-धिकी समान है और विना कारण के मृत्यु तुल्य है और विना बद्दल की विजली की माफिक है और बान्धवोंका प्रेम नाश करने वाली हैं और विना विचार का कार्य करना असत्य बोलना, और आदि शब्द से अदत्त अब्रह्म परिग्रहादिक संबन्धमें सन्ताप का उ-त्पत्ति स्थान है, साक्षात् राक्षसी समान है, शास्त्र में कही गई ऐसी स्त्री को ज्ञानी पुरुष त्याग करें ॥ ८ ॥

कुशील नरको उपदेश।

कामार्त्तस्त्यजति प्रबोधयति वा स्वस्त्रीं परस्त्रीं न यो, दत्तस्तेन जगत्यकीर्त्ति पटहो गोत्रे मषी-कूर्च्चकः। चारित्रस्य जलांजलिर्गुणगणारामस्य दावानलः, संकेतः सकलापदां शिवपुरद्वारे क-पाटो दृढः॥ १॥

सवैया—सो अपजस को डंक वजावत, लावत कुल कलंक परधान। सो चारित्र को देत जलांजलि, गुणवनको दावानल दान॥ सो शिव पंथको द्वार (किंवाड) बनावत, आपत विपति मिलनको स्थान। चिन्तामणि समान जग जो नर, शील रतन निज करत मलान॥ १॥

अर्थ—जो पुरुष विषयांध होकर अपनी स्त्रीको नहीं बोलता हैं और परस्त्रीका त्याग नहीं करता है, अर्थात, अपनी स्त्री होने-पर परस्त्री का संग करता हैं वह पुरुष जगतके विषे अपनी अ-पकीर्त्तिका पटह (ढोल) बजाता है, अर्थात् दूनिया में अपनी अपकीर्त्ति फेलता है। अपना निष्कलङ्क कुल को लांछन लगाता हे, देश विरति या सर्व विरति रूप चारित्रका नाश कर देता है, गुणके समुहरूपी बगीचेमें दावानल लगाता है अर्थात् सभी गुणों को नाश कर देता है, समस्त आपत्तियों के (दु.खों के) आनेका रास्ता करता है ओर मोक्षमें जानेका द्वार मजबूत बन्द कर देता है। सारांश इतना ही हैं की कुशील मनुष्यका सर्व कार्य व्यर्थ होता हैं॥१॥

शीलगुण वर्णन—

व्याघ्रव्यालजलानलादिविपदस्तेषां व्रजन्ति क्षयम्, कल्याणानि समुल्लसन्ति विबुधाः सानिध्यमध्यासते। कीर्त्तिः स्फूर्त्तिमियर्त्ति यात्युपचयं धर्मः प्रणश्यत्यघम्, स्वर्निर्वाण सुखानि सन्निदधते ये शीलमाबिभ्रते ॥ २ ॥

भाषा छंद—कुल कलंक दल मिटे, पापदल पंक पखारे। दारुन संकट हरे, जगत महिमा विस्तारे ॥ सरग मुगति पद रचे, सुकृत संचे करुणारसि। सुर गुण वंद हि चरन, शील गुण कहत बनारसी ॥ २ ॥

भावार्थ—जो मनुष्य शील (ब्रह्मचर्य) को धारन करता है, उस मनुष्य को बाघ दुष्टसर्प जल और अग्नि आदिकी जो आपत्तियें (दुःखों) हैं, वे सभी नाश हो जाती है और कल्याण (सुखों) प्राप्त होते हैं, देवता भी उसको आधिन रहते हैं, दुनियामें उसकी कीर्त्ति फेलाती है, धर्म की वृद्धि होती है, पाप नाश हो जाते हैं और स्वर्ग मोक्ष के सुखों प्राप्त होते है, इत्यादि शीलव्रत धारन करनेवाले मनुष्य को प्राप्त होते हैं ॥२॥

मालिनी छंद—

हरति कुलकलङ्कं लुम्पते पापपङ्कम्,
सुकृतमुपचिनोति श्लाध्यतामातनोति।

नमयति सुरवर्गं हन्ति दुर्गोपसर्गम्,
रचयति शुचिशीलं स्वर्गमोक्षौ सलीलम् ॥ ३ ॥

सवैया तेवीसा—ताहि न बाघ भुयंगम को भय, पानि न बोरे न पावक जाले। ताके समीप रहैं सुर किन्नर, सो सुभ रीति करे अघ टाले ॥ तासु विवेक बढै घट अन्तर, सो सुरके शिवके सुख भाले। ताकी सुकीरति होइ तिहु जग, जो नर शील अखंडित पाले ॥ ३ ॥

भावार्थ—निर्मल ऐसा ब्रह्मचर्यव्रत कुलका कलंकको नाश कर देता है, पापरूपी मैलको हटा देता है, सुकृत को बढ़ाता है, प्रशंसाको फैलाता है, देववर्ग को नमाता हैं, अर्थात् ब्रह्मचर्यव्रत-वालेको देवता भी नमस्कार करते है, दुष्ट उपसर्गोका नाश करता है और स्वर्ग और मोक्ष के सुखोंको लीलामात्र में देता है। यह एकही शीलव्रत सब सुखोंका देनेवाला है, इसलिये शीलव्रतको कभी भी छोड़ना नहीं चाहिये ।

तोयत्यग्निरपि स्रजत्यहिरपि व्याघ्रोऽपि सारङ्गति;
व्यालोऽप्यश्वति पर्वतोऽप्युपलति क्ष्वेडोऽपि पीयूषति । विघ्नोऽप्युत्सवति प्रियत्यरिरपि क्रीडातडागत्यपां- नाथोऽपि स्वगृहत्यटव्यपि नृणां शीलप्रभावाद् ध्रुवम् ॥ ४ ॥

छप्पय छन्द—अगनि नीर सम होइ, माल सम होइ भुयंगम ।
नाहर मृग सम होइ, कुटिल गज होइ तुरङ्गम ।

विष पीयूष सम होइ, शिखर पाषान खंड मित।
विघन उलटि आनन्द होइ, रिपु पलटि होइ हित।
लीला तलाव सम उदधि जल, गृह अटवी विकट।
इणविध अनेक दुःख होइ सुख, शीलवंत नरके निकट ॥४॥

भावार्थ—ब्रह्मचर्य मनुष्यको शीलके प्रभावसे अग्नि तो जल समान हो जाती है, सर्प तो फूल की माल समान होजाता है, सिंह भी हीरण समान हो जाता है, दुष्ट हाथी भी अश्व समान हो जाता है, बड़े बड़े पर्वत भी पत्थर तुल्य हो जाते है, विष भी अमृत हो जाता है, विघ्नों भी उत्सव समान होते हैं, शत्रु भी मित्र समान होता है, बड़ा समुद्र भी क्रीडाका तलाव सदृश होता है और भयंकर जंगल भी अपना घर सदृश होता है अर्थात् शीलवंत पुरुषों को शील के प्रभाव से पूर्वोक्त दुःख सुखरूप हो जाते है।

॥ सुदर्शन सेठकी कथा ॥

इस जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्र में प्राचीन कालमें शुद्ध एक पत्नीव्रतको पालनेवाले असंख्य पुरुषों हो गये हैं, इन्हीं में से उस व्रतको पालनेके लिये बहुतसे दुःखो सहन कर नामांकित हुआ हुवा सुदर्शन नामका एक सत्पुरुष भी था। वह बड़ा

धनाढ्य सुंदर मुखाकृति वाला और तेजस्वी था, पाटलीपुत्र (पटना) नगरमें वह रहता था उस नगरके राजद्वार के नजदीक होकर एक दिन कार्य प्रसंगसे उनका निकलना हुआ, उस समय राजाकी अभया नामकी राणी अपना महलके झरूखामें बैठी बैठी नगर चर्या देख रही थी, उसकी दृष्टि सुदर्शन पर पड़ी ; जिससे उसका मनोहर सुंदर स्वरूप देखकर राणीका मन लल-चाया और उसके पर मोहित होकर अपनी दासी द्वारा कपट भावसे अच्छा कारणका बहाना कर सुदर्शनको महलमें बोलवाया । कितनैक प्रकार की बातचीत होने बाद राणीने सुदर्शन को अपने साथ भोग भोगनेको आमंत्रण किया । वह सुनकर स्वदारा संतोषी व्रतको पालनेवाला सुदर्शनने राणीको उपदेश देकर बहुत समझा यी, मगर उसका मन शान्त नहीं हुआ; जिससे अन्त्यमें कहा कि बहिन ! मैं पुरुषत्वमें नहीं हूं, तो भी राणीने अनेक प्रकारके हाव भाव किये।

इन कामचेष्टायेंसे सुदर्शनका मन चलायमान नहीं हुआ, जिससे आखीरमें कंटालकर राणी ने उसको निकाल दिया।

एक दिन वसन्तोत्सवमें नगरके लोग आनन्द करनेके लिये बगीचें या उद्यानमें जाकर खेल कर रहे थे, वहां सुदर्शन सेठ भी अपने देवकुमार जैसे छः पुत्रोंको लेकर वहां आनन्द लीला करने को आये थे, उस वख्त अभयाराणी कपिला नामकी दासीके साथ बड़े आडम्बरसे वहां आई। वह सुदर्शन सेठके साथ देवकुमार जैसे छः पुत्रोंको देखकर कपिलाको कहने लगी कि ये दिव्यस्वरूपवाले पुत्रों किसके हैं? कपिलाने कहा कि ये तो सुदर्शन सेठके ही है। ऐसा सुनकर राणीकी छातीमें वज्राघात हुआ और विचारने लगी कि मेरे को इसने ठग ली तो इसका बदला भी उसको वतला देउँगी। अब वसन्तोत्सव समाप्त होने बाद माया प्रपंच रचकर, राणी और दासी दोनों राजाको कहने

लगी— आप मानते हैं कि मेरा राज्यमें अच्छी तरह न्याय और नीति हो रही है, दुर्जनोंसे मेरी प्रजा दुःखी नहीं है, परन्तु ये सब मिथ्या है; अन्तपुरमें दुर्जनों प्रवेश करे वहां तक भी अंधेर है, तो पीछे दूसरा स्थान के लिये तो कहना ही क्या? आपके नगरमें सुदर्शन नामका सेठ रहता है उसने मेरी पास विषय भोगका आमंत्रण किया, इनकार करके मैंने उसका तिरस्कार किया तो मेरेको कितनेहीं अयोग्य वचनों सुनने पड़े तो इससे विशेष अंधेरा क्या कहना?

प्रायःकर राजाओं कानके कच्चे तो होते ही हैं। ये बात बहुमान्य है तो उसमें स्त्रीके माया-वी मधुर वचनों क्या असर नहीं करे? उष्ण तैलमें ठंढा जलकी जैसे वचनसे राजा अत्यन्त [illegible]ोधित हो कर सुदर्शनको शूलीपर चढ़ा देने तत्काल आज्ञा कर दी, जिससे नगरका को-[illegible]ल सुदर्शनको शूलीपर चढ़ानेके लिये ले गये

मगर अन्त्यमें सत्यका सर्वत्र जय होता है। अब यहां पर सुदर्शनको शूलीपर चढ़ाते ही शूली के स्थानपर दिव्य प्रकाश वाला सुवर्ण का सिंहासन हो गया और आकाशमें देवदुदंभी का नाद होने लगा, सर्वत्र आनन्द फैल गया, सुदर्शनका सत्य शीलव्रत विश्वमें प्रकाश हो गया, सत्य शीलका सर्वत्र जय है ; शील और सुदर्शनकी उत्तम दृढ़ता ये दोनों आत्माकी पवित्र श्रेणी पर चढ़ाते है॥

॥ इति ॥

॥ श्रीवीरकुमारकी कथा ॥
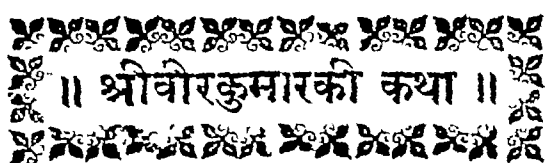
श्रीनिलय नामका नगरके विषे रिपुमर्दन नामका राजा राज्य करता था, उसको कमलश्री नामकी पतिव्रता और स्वरूपवती स्त्री थी, और उसके विनयादि गुण सम्पन्न कई एक पुत्र थे, इसमें एक वीरकुमार नामका बड़ा तेज-

स्वी पुत्र था_ वह शूरवीर धीर कृतज्ञी और नि-
ष्कलंक था। एक दिन वह कुमार बड़ा भयंकर
अटवी के विषे आहेड़े (शिकार) के लिये गया,
मगर वहां पर मृग-शशक आदि कोई भी
जानवर उसको दृष्टिगोचर नहीं हुआ। जिससे
आश्चर्य पाते हुए परिवार समेत आगल चला तो
एक स्थान पर शशक मृग महिष गज वृषभ
वाघ सिंह चित्ता आदि सब तिर्यंच अपना २
जातिवैरको छोड़ कर एक साथ बैठे थें और
मेघकी जैसे गंभीर शब्दोंसे सज्झाय ध्यान
करते हुए मुनिजनोंका शब्द सुन रहे थें। ऐसा
देखकर कुमारने अनेक प्रकारके शस्त्रों उन ति-
र्यंचों पर फेंके, मगर उनके शरीर पर एक भी
न लगा: तब कुमार विचारने लगा कि जानव-
रोंका वैर (द्वेष) उपशान्त है, जिससे उनको एक
भी शस्त्र न लगा, वह सब इन मुनिओंका प्रभाव
है। ऐसा विचार कर अपना परिवार समेत मुनि
समीप जाकर नमस्कार किया और उचित

स्थानपर बैठा। मुनि भी उनको धर्मलाभ रूपी आशिष देकर योग्य जानकर धर्मदेशना देने लगे।

जो प्राणी जीवहिंसा नहीं करता है, वह अनेक तरहकी सिद्धिको प्राप्त कर परम सुखका भोक्ता होता है। सब पापोंमें जीवहिंसाका पाप बड़ा कहा है और नरक का कारण है, सब जीवों को अपना अपना जीवितव्य वहाला है,जैसे अपने को मरण अनिष्ट है वैसे समस्त जीवोंको मरण अनिष्ट है यतः कहा है कि "—अमेध्य मध्ये कीटस्य, सुरेन्द्रस्य सुरालये। समाना जीविता-कांक्षा, समं मृत्युभयं द्वयो॥ १॥" भावार्थ— विष्टामें रहा हुआ कोड़ाको और स्वर्गमें रहा हुआ इन्द्रको, इन दोनोंको जीनेकी इच्छा और मरणका भय समान है। यतः— दुर्वचन गाल घात,पराभव भवबंधन और मरना ये जैसे अपने को अनिष्ट है वैसे दुसरोंको भी अनिष्ट है। एक जनको कोई एकछत्र राज्यका दान दे और

कोई एक जीवित दान दे, तो इन दोनोंमें जीवित देनेवालेका फल अधिक हो जाता है। फिर देखो, धन बंधव स्वजन पुत्र कलत्रादि सबसे अपना जीवित अधिक प्रिय है यह तो प्रत्यक्ष अनुभव सिद्ध है। जो मनुष्य होकर भी मांस खाता है और रुधिर पीता है तो कौवा कुत्तासे इनमें क्या तफावत हुआ? जो जीवता अशरण अनाथ जीवोंको मारकर उनका मांस खाय, रुधिर पीये, वह नरक सिवाय अन्य स्थानकमें उत्पन्न नहीं होता। अनेक प्रकारके स्वादवाले सुखड़ी प्रमुख अच्छे अच्छे भोजन हैं उनको छोड़कर जो अपवित्र वस्तु मांस हैं उनको निर्दयपन से खाता है तो इसमें क्या अधिकपना देखा है?

इत्यादि मुनिकी धर्मदेशना सुनकर कुमार समकित पाया और स्थूल निरपराधी प्राणीको नहीं मारना, परस्त्रीका सेवन नहीं करना और मांस भक्षण नहीं करना, ऐसे नियम लिये।

पीछे मुनि अन्यत्र विहार कर गये और कुमार अपने घर पर आया।

एक दिन राजा बुद्धिकी परीक्षा करनेके लिये अपने सब कुमारोंको इकट्ठा कर पूछने लगे कि—"पंचाल देशमें एक अधिकारी भेजना चाहते हैं तो एक जन बड़ा निपुण और प्रकृतिका अवंचक है, वह कहता हैं कि मैं एक वर्षमें दस लाख सोनैया की आमदनी कर देउंगा, और दूसरा कहता है कि मैं पन्द्रह लाख सोनैया की पेदाश (आमदनी) कर देउंगा, यह दूसरे की बात पहले दस लाख की आमदनी वालेको कही तब उसने कहा कि मेरे से दसलाखसे अधिक आमदनी नहीं हो सकती, आपको जचे वैसा करें" तो हे कुमारो ! अब कहो कि इन दोनोंमेंसे किसको भेजना। यह सुनकर सब कुमारों बोले कि जो अधिक आमदनी कर देवे उसको भेजना चाहिये, मगर वीरकुमार नहीं बोला जिससे राजाने पूछा कि तूं क्यों

नहीं बोलता ? तब वीरकुमार बोला कि मेरेको तो जो प्रथम पुरुष है वह निपुण, अवंचक तात को हितकारी, प्रजाको दुःखी नही करे ऐसा है, इस लिये उनको भेजना अच्छा है। कारण कि प्रजा दुःखी न हो तब व्यापारी व्यापारादिक सुखसे कर सकते हैं जिससे राजाको न्यायका धन विशेष आवे, न्यायसे चलनेसे धर्मकी वृद्धि होती है, इसलिये थोड़ा मगर न्यायसे धन उपार्जन करे उसको अधिकारी करना योग्य है। दूसरा पुरुष पन्द्रह लाख द्रव्य अन्यायसे उपार्जन करे,उस अन्यायसे आपका अधर्म और अपयश फैलेगा। एक वर्षमें पन्द्रह लाख आया तो पीछे दूजे तीजे वर्षमें एक लाख भी नही उपजेगा, यतः कहा है कि—" अत्युपादानमर्थस्य, प्रजाभ्यः पृथिवीभुजाम्। दुग्धमादाय धेनूनां, मांसाय स्तनकर्त्तनम्॥ १॥ राजाओं लोभवश हो कर प्रजासे अधिक धन ले वह गौके स्तनमेंसे दूध निकालनेबाद भी दोहनेके जैसा है। ऐसा वीर-

कुमार का बचन सुनकर राजा विचारने लगे कि यह कुमार वयसे छोटा है मगर बुद्धिसे सबसे बड़ा है,इसलिये यह राजभार वहन कर सकेगा। यदि इसका गुण मैं प्रगट नहीं करूँगा तोभी नगरमें इसका गुण गुप्त नहीं रहेगा, और सब कुमारोंसे यह विपरीत बोला है जिससे इसके ऊपर सब कुमारों मत्सर (इर्षा) करेंगे। इसलिये यहां से उसको देशान्तर भेजना चाहिये। ऐसा विचार कर राजा बोला कि हे कुमार! तेरा गुण बहुत है तो तेरे को बापकी ऋद्धि भोगवना योग्य नहीं, इसलिये तूँ यह देश छोड़कर परदेश चला जा। यह सुनकर वीरकुमार राजाको प्रणाम कर अपना मित्र जो मतिसागर प्रधानका पुत्र विमल नामा है उसको साथ लेकर वहांसे रवाना हुवा। राजाने उनकी रक्षाके लिये कुमारको मालुम न हो ऐसे मुसाफिरके वेशवाले सुभटों भेजे। कुमार तथा मन्त्रीपुत्र दोनों चलते चलते कोशलपुर आ कर विश्राम किये। वहां अनेक प्रकार

के वाजिंत्रके शब्दके साथ बड़ा कोलाहल सुना, तब मंत्रीपुत्र विमलको कुमारने पूछा कि यहां यह महोत्सव क्या है? तब विमलने किसीको पूछकर कुमारको कहने लगा कि इस नगरका रणधवल राजाको अपना प्राणसे भी अधिक प्यारी और पुरुष द्वेषिणी कुरुमती नामे एक कन्या है, उसका विवाहके लिये राजाने कुलदेवीका आराधन कर पूछा कि इसके योग्य वर कोन होगा? तब देवीने कहा कि तुम्हारा पट्टहस्ति जिसके गलेमें फूल को माला पहरावे वह पुरुष इस कुंवरीका भर्त्तार होगा और उसके पर कुंवरीका पूर्ण अनुराग होगा। वह बचन सुनकर राजा अपना पट्टहस्ति को अच्छी तरह शिणगार कर, पूजकर, उसकी ऊपर कुंवरीको बैठाकर, अंकुश रहित छूटा छोड़ दिया है, वह हाथी सूंढ में फूलकी माला धारण कर राजपुरुषोंके साथ नगर में घूम रहा है। ऐसी वात कर रहे है इतनेमें पटहस्ति भी वहां आकर वीरकुमारके कंठमें वर-

माला पहरा दी और अपनी सूंढ़से कुमारको अपनी पीठ पर चढ़ा दिया। कामदेवके अवतार जैसा स्वरूपवान कुमारको देखकर राजा बहुत खुशी हूआ, कुंवरी भी उसको देखकर आनन्द पाई। उस समय कुमारके शरीरसे धूल झटकावनी के लिये दश हाथी, एक लाख सोनैया और एक हजार घोड़ा राजाने दिये। छायालग्न निकाल कर कुसुमतीका पाणिग्रहण (विवाह) किया, हस्त मिलाप समय में राजाने एक हजार गांव दिया और रहने को महल दिया। कुमार वहां रहता हुआ आनन्दसे समय व्यतीत करने लगा। यह सब समाचार कुमारके पिताने जो गुप्त पुरुष भेजे थे उसने जाकर कुमारके पिता को सब समाचार सुनाया यह सुनकर राजा बड़ा आनन्दित हुआ।

अब एक दिन रणधवल राजाने कुमारको पूछा कि विवाहमें अपने मांसादिक रहित भोजन किया उसका क्या कारण? तब कुमार कहने

लगा कि पंचेन्द्रिय जीवका वध विना मांस भ-
क्षण होगा नहीं, और पंचेन्द्रियका वध करना
वह नरकमें जानेका परम कारण है। इत्यादिक
मांसके वहु दोष बतलाय। और प्रसङ्गोपात साधु
तथा श्रावकका धर्म भी कहा। अपने श्रावक धर्म
अंगीकार किया है और मांस प्रमुखका परिहार
किया है,वह भी कह दिया। ऐसा सुनकर राजा
ने धर्म पर बहुमान हुआ, परम विश्वास हुआ,
राजाने मांस भक्षण त्याग कीया और सुदेव
सुगुरु और सुधर्म ये तीन तत्व अंगीकार कीया।

एक दिन संध्या समय एक स्त्री आ कर
कुमार को कहने लगी कि हे कुमार! राजा की
रानी, मंत्रीकी भार्या, सेठकी भार्या और प्रति-
हारकी भार्या,ये चार स्त्री आपको देखकर काम-
विह्वल हुई हैं, उन चारोंने मुझको अलग अ-
लग भेजी है तो उन चारोंको एक दूजी न जा-
ने इस तरह आपका समागम हो ऐसी कृपा
करें। वह सुनकर कुमार अपना मनसे निश्चय

विचार कर बोला कि कल रातका पहिले प्रहर प्रतिहारीको भेजना, दूसरे प्रहर सेठानीको, तीसरे प्रहर मंत्रीकी भार्याको और चौथे प्रहर रानी को भेजना ; यह सुनकर हर्ष पाती हुई कार्यसिद्ध मानती अपने अपने स्थानपर जा कर सब को खबर कर दी ।

अब कुमार राजाको कहने लगा कि हे राजन् ! जो देखा नहींदेखा करो तो मैं कुच्छ बात बतलाउं, तब राजा बोला कि तूँ मेरे पुत्र समान है फिर तेंने मुझको धर्म समजाय कर मेरा जन्म सफल किया, इसलिये चाहे जहां मुझको जोड़, तब कुमार बोला कि आज संध्या समय मेरा आवास में गुप्त रीतसे आना ।

अब संध्या समय राजा गुप्त रीत से कुमार के महल आया, कुमार ने अपने पलंग के पीछे गुप्त रीत से बैठा दिया । अब कुछ भी कारण का बहाना कर प्रतिहारी अपने घर से रवाना होकर कुमार के पास आई, तब कुमार कहने लगा कि

हे भगिनि ! जो विषय है वह इस लोक में बड़ा दुःखदायी है और परलोक में नरक का कारण है, इसलिये "कौवे का मांस कुत्तेने भुठा किया" यह न्याय सच्चा है, तो भी जो विषय से तृप्ति होती हो तो विषय भोगना ही ठीक है, जैसे मि- ष्ठ भोजन से तृप्ति होती है वैसे विषय भोगसे तृप्ति नहीं होती और विषय सेवन से परलोकमें नरक का कारण है तो ये दोनों दंड क्यों सहन करना चाहिये ? फिर यह जीवने तो देवताके भव में अनेक सागरोपम तक विषय भोगव्यां तो भी तृप्ति न हुई तो थोड़ा काल मनुष्यके भवमें तुच्छ भोग भोगने से कैसे तृप्ति होगी ? यद्यपि विषय आतापमात्र मनोहर लगता है, मगर परि- णाम में किंपाक के फल समान दुःखदायी है, इसलिये विषय को छोड़ इन्द्रिय और मन को दमन कर,मोक्ष मार्ग के विषें उद्यम कर। मोक्ष का मार्ग तो सम्यक् ज्ञान सम्यक्दर्शन और सम्यक् चारित्र है, इन रत्नत्रय का स्वरूप विस्तार

से समझाया, जिससे प्रतिहारी प्रतिबोध पाई। दूसरे प्रहर सेठानी आई तब प्रतिहारीको अपनी पूंठे जवनिका के आन्तरे बैठाकर सेठानीको प्रतिबोध दिया, जिससे वह भी प्रतिबोध पाई। तीसरे प्रहर मंत्रिकी भार्या आई, तब सेठानी को भी जवनिका के आन्तरे बेठा दी और मंत्रि की भार्या को प्रतिबोध कर सन्मार्ग पर लाकर, उसको भी जवनिका के आन्तरे बेठा दी। अब चौथे प्रहर रानी आई तब कुमार आसन से उठ कर प्रणाम किया, तब राणी बोली हे नाथ ! यह क्या अबी खड़ा होनेका और प्रणाम करने का अवसर है ? अबी तो आप का सुन्दर अङ्गस्पर्श से कामाग्निसे जलती हुई मुझको शीतल करें। यह मेरी आशा को आप पूर्ण नहीं करेंगे तो मेरा हृदय फट जायगा, ऐसा सुनकर कुमार ने उसकी तरफ देखा भी नहीं और विचार किया कि अबी यह मदोन्मत्त है जिससे उपदेश पाने योग्य नहीं है। तब फिर रानी बोली कि

जो महापुरुष होते हैं वह सत्य प्रतिज्ञावंत होते हैं यतः —"सकृदपि यत् प्रतिपन्नं तत् कथमपि न त्यजन्ति सत्पुरुषाः" जो एक वार स्वीकार कर लिया तो उसको किसी प्रकार सत्पुरुष नहीं छोड़तें, तो आप मुझे एकान्त में बोला कर क्यों विमुख बैठ रहे हैं ? तब कुमार बोला कि आप को बोलवा कर जिनधर्म में स्थापित कर परलोक के विषे दुःख देनेवाला ऐसा दुष्ट चरित्र से दूर रखुंगा; तब राणी बोली वैसे ही करना, मगर एक वार तो आपके अङ्गका स्पर्श कर पीछे जैसा आप कहेगें वैसा करूंगी; कुमार बोला पाणि ग्रहण के दिन से आज तक कंदर्पावतार जैसा राजा का निरंतर संगम करते भी आप के विषय भोगकी तृप्ति नहीं हुई तो मेरा संग वह भी चोरीसे करना उससे तृप्ति कैसे होगी ? इसलिये दुर्बुद्धि का त्याग कर सन्मार्ग का सेवन करो। इत्यादि पूर्वोक्त युक्ति से बहुत समझाई मगर रानी समझी नहीं और कहने लगी कि ये

सब आपका कहा हुआ करूंगी, मगर आपने जो मेरी दूती को बचन कहा था उसका पालन करो, तब कुमार बोला कि जो मैं दूती से कहा था वह आपको सन्मार्गमें लानेका अभिप्रायसे कहा था, तो इस जन्ममें तो मेरे साथ आपका मनोवांच्छित पूर्ण नहीं होगा। ऐसा कुमार का अपूर्व धैर्य देखकर और अपना दुष्ट अध्यवसाय देखकर राणी वैराग्य पाती हुई कुमारको प्रणाम कर कहने लगी हे बंधव! मैं आपकी पापिनी भगिनीने आप का बड़ा पराभव किया, तो इस पाप से कैसे छुटुंगी? मैं आपकी ओरमान माता की पुत्री लघु बहिन हूँ, आप अपना कुलरूप आकाश में चन्द्रमा तुल्य हुए, आपने परनारीको अपनी भगिनी [बहिन] तुल्य मानी है। मैं तो कलंकवाली हूँ, तो अब प्राण कैसे धारण करूं? इसलिये अब मुझे आपकी आज्ञाका ही शरण है एसा कह कर कुमार को आज्ञा से अपने महल गई और दूसरी तीनों स्त्रियां भी पर पुरुष का

नियम कर, समकित प्राप्त कर कुमारको नमस्कार कर अपने अपने स्थान पर गई। अब राजा कुमारको कहने लगा कि हे महायशः के स्वामी ! इस संसार रूप नाटक बतला कर मेरे पर बड़ा उपकार किया, अब आज्ञा दो तो मेरे स्थान पर जाउं, तब कुमार राजाको पहूंचा आया।

प्रातः काल का समय है, रणधवल राजा और वीरकुमार एक साथ बैठे बैठे धर्मचर्चा कर रहे हैं, इतने में ईशान कोणमें बड़ा दिव्य तेजका प्रभाव दृष्टिगोचर आया, वह देखकर प्रतिहारी को कहा कि इतना तेजस्वी प्रभाव क्या है? वह तलास कर राजा को कहने लगा कि—उद्यानमें केवली भगवान समवसर्या है, उसको वंदना करनेके लिये देवता आते हैं, उसका यह तेज है। ऐसा सुनकर बड़े हर्षित होते हुए राजा और कुमार दोनों सब कार्य छोड़कर परिवार समेत केवली को वंदना करने के लिये रवाने हूए; वहां

जाकर विधिपूर्वक वंदना कर, पर्षदामें बैठे। केवली भगवानने भवतारिणी धर्मदेशना सुनाई, जिससे कइ एक जन प्रतिबोध पाकर चारित्र अंगीकार किया। रणधवल राजा भी अवग्रहसे बाहिर आ कर, मुकुटादि सर्व राज अलंकार कुमार को दे कर, अपना परीवार को कहा कि आजसे यह वीरकुमार तुम्हारा राजा है, मैं तो आजसे दीक्षा अंगीकार करुंगा, ऐसा कह कर केवली भगवानके पास दीक्षा अंगीकार की, वैसे अपना पापकी शुद्धिके लिये राणीने भी दीक्षा ली। कुमार सबको वंदना कर अपने स्थान पर आया और केवली भगवान कइएक दिन ठहर कर अन्यत्र विहार कर गये।

कुमार राजगादि पर बैठ न्यायसे राज का पालन करता था और जैनशासन का प्रभाव कर रहा था। मंत्रीश्वरको भी सब कार्यमें आगे कर अपने बरावर मानता था। एक दिन रिपुमर्दन राजाने कागज भेज कर कुमारोको बोल-

वाया, जिससे अपना विमलनामका मंत्रीको राज-
कारभार दे कर श्रीनिलयपुर अपना पिताके पास
गया। वहां जाकर अपना पिता को अच्छी
तरह धर्म सुनाया जिससे राजा धर्मतत्व जानकर
कुमारको राजगादी दे कर अपने चारित्र अंगी-
कार किया। वीरकुमार भी बहुत काल तक
सुखसे राज पालन कर अंत्यमें रणधवल राजऋ-
षि के पास चारित्र लेकर, अनेक देशोंमें विहार
कर, लोगों को धर्मोपदेश सुना कर, घनघाती
कर्मका क्षय कर, केवल ज्ञान पाकर, अक्षय पद
को प्राप्त हुए। ऐसे कंदर्पका मदको तोड़कर
लोगों को चमत्कार बतलाकर वीरकुमार कल्याण
की परंपरा पाया ऐसा समझकर परस्त्रीका त्याग
अवश्य करना श्रेयः है॥

॥इति॥
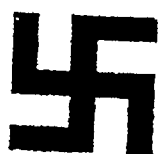
अथ श्रीसुरप्रियकुमारकी कथा

मगध देशके राजगृह नगरमें श्रीवीरजिनके प्रभास नामका ग्यारहवां गणधर का भाई यज्ञ-प्रिय नामका ब्राह्मण रहता था, उसकी यज्ञयशा नाम की स्त्रीसे सुरप्रियकुमार का जन्म हुआ था ; वह विनयादि गुणसंपन्न स्वरूपवान और शीलादि गुण करके देवताओं को भी प्रिय था।

एक दिन धर्मरुचि मुनिको प्रभास गणधर-जीने कहा कि राजनगर जाकर यज्ञप्रिय नामका ब्राह्मण को धर्मोपदेश करना, वह सुनकर धर्म-रुचि मुनि अनुक्रमे विहार करते करते यज्ञप्रिय के घर आये, यज्ञप्रिय विनयसे खड़ा होकर मु-निको आसन दिया उस पर मुनि बैठे, बाद-यज्ञप्रिय परिवार समेत मुनिको वंदना की, मुनि भी वीरप्रभु के गणधर का परिवार होनेसे बहुत प्रशंसा करके कहने लगे कि प्रभासगणधर ने मेरे मुखसे इतना कहवाया है कि मनुष्यभवादि

सामग्री दुर्लभ से पाकर धर्मकार्यमें किञ्चित् भी प्रमाद करना नहीं, ये वचनों ब्राह्मणने बड़े आदरसे स्वीकार लिया। फिर मुनि बोला कि तुम्हारा व्रतका सुखसे पालन होता है? ब्राह्मण बोला कि आपकी कृपासे इतना काल तो सुखसे व्रत का पालन हुआ है, अब आगे तो नहीं कह सकता कि कैसे बनेगा। यह सुरकुमार सौभाग्यादिक गुण करके अतिशयवंत है, उसको पांव पांवमें स्त्रीयों कामभोगकी प्रार्थना करती हैं, तो हे भगवन्! यदि यह शीलव्रत खंडन करेगा तो शरत्कालके चन्द्रमा जैसा हमारा स्वच्छ कुल है उसमें कलंक लगेगा। यह सुनकर मुनि बोला कि हे विप्र! विषाद (खेद) नहीं करो, कुमार पुण्यानुबंधि पुण्यावाला है तो यह अकार्य कैसे करेगा? ऐसा सुनकर यज्ञप्रिय मुनिको वंदना कर कहने लगा कि इसने पूर्वभवमें ऐसा क्या सुकृत कीया है? वह कहो, तब मुनि बोला कि यह पीछला भवमें वाणारसी नगरका अरिमर्दन

राजाका जयमाली नामका पुत्र था, वह एक दिन वसंततिलक नामके उद्यानमें क्रीड़ा करनेको गया, वहां अशोकवृक्ष नीचे चारण मुनिको देखा, उसको भक्तिसे नमस्कार कर उसका मुख आगे बैठा। इतनेमें अनंगकेतु नामा एक विद्याधर स्त्री सहित वहां आया, वह भी मुनिको वंदना कर बैठा, तब मुनि विद्याधरको पूछने लगे कि हे विद्याधर! यह तेरे साथ स्वरूपवंती अबला कौन है? तब मुनिको नमस्कार कर लज्जा से नीचा मस्तक कर बोला कि यह ताराचन्द्रनामा विद्याधरका स्वामी की पुत्री है, उसका पति मरतंगी साथ रक्त हुआ तब यह पति उपर विरक्त हूई ऐसा समझ कर मैंने इसको अंगीकार की। मुनि बोला हे भद्र! परस्त्री गमन वह पुरुषको अपना कुलमें कलंक है, द्वेष और अपयश का कारण है, वैसे परभवमें नरकने भयंकर दुःख देनेवाली है, परमाधामी देव गरम जलती हुई तांबा की पुतली साथ आलिंगन कराते हैं, ऐसे

मुनि उपदेश द्वारा समझा रहे है इतनेमें स्त्रीका भर्त्तार खुल्ला शस्त्र ले कर अनंगकेतुको अत्यन्त तर्जना करता हुआ वहां आया । अनंगकेतु भी लड़ने के लिये तैयार हुआ और कहने लगा कि हे मातंगोका धणी ! आज तूँ अपने कर्मों से मरेगा, ऐसा आक्षेप कर युद्ध करने लगा। वे दोनों बहुत देर तक युद्ध करते २ दोनों मरण पायें और स्त्री भी अपरपति अनंगकेतुका शरीर लेकर अग्निमें जल गई । ऐसा देख कर चारन-मुनि शोक करने लगे, तब जयमाली मुनिको पूछने लगा कि आप शोकाग्रस्त कैसे हुए ? मुनि बोला कि यह विद्याधर संसारपनेका मेरा भाई था, वह अवी नवकार रहित सहसा पापसे मरण पाया, वह हमको शोकका कारण हो गया, ऐसा सुनकर जयमाली नमस्कार कर कहने लगा कि हे भगवन् ! मुझको परस्त्री गमन त्याग (चतुर्थ व्रत) करा दो । तब मुनि बोला कि प्रथम मैं इस व्रत का स्वरूप बतलाता हूँ उसको श्रवण कर।

परस्त्री के दो भेद है—एक वैक्रिय शरीर संबंधी और दूसरी औदारिक शरीर संबंधि। औदारिक के दो भेद है—एक मनुष्य संबंधि, दूसरी तिर्यंच संबंधि। मनुष्यमें भी दो भेद है— एक परणीत और दूसरी संग्रह की हूई। इतने भेदमें जितने भांगे व्रत लेना उसकी विरति वह चौथा व्रत है। इस व्रतका पांच अतिचार है—प्रथम अपरिग्रहितागमन, दूसरा इत्वर वह अल्प काल तक कोई स्त्रीको भाड़े रखना, ये दो अतिचार सेवन करने से व्रत भांगेगा, ऐसा जानता हुआ सेवे तो व्रत भंग होता है। कभी विधवागमन या वैश्यागमन करने गया और व्रत याद आया मेरे तो परस्त्री का पच्चक्खाण है और यह किसी की स्त्री तो नहीं है तो मेरा व्रत कैसे भांगेगा? तथा दूसरे अतिचारमें भाडे रखी हो इसमें विचार करे कि यह मेरी स्त्री है, इसमें व्रत कैसे भांगे? ऐसा व्रत सापेक्षपनसे अज्ञानपने विचार कर भोगवे तो अतिचार लगे और जानकर भोगवे

तो व्रत भंग हो जावे। तीसरा अनंग क्रीड़ा अतिचार वह स्त्री आदिक को चूंबनादि करे तो लगे। दूसरेका विवाह आदि करादेवे साटा करे यह पर विवाह करण चोथो अतिचार। और तीव्र अनुराग रखे रात्री दिन काम भोगमें चित्त रखे यह पांचवाँ अतिचार। ये पांच अतिचार छोड़ना चाहिये। व्रत पालने का फल कहा है कि—इस लोकमें यशकीर्ति और सौभाग्य बढ़ता है, परलोकमें स्वर्ग तथा मोक्ष के सुख पाते है। जो प्राणी इस व्रतको ग्रहण न करे या ग्रहण करके भांगे वह प्राणी दुर्भाग्य होता है, नपुंसक होता है और दुर्गति में जाता है। ऐसा सुनकर राजकुमार भी विशेष तत्व जानकर मुनि के पास चौथा व्रत अंगीकार किया। चारनमुनि आका-श मार्गे गरुड़ की जैसे उड़कर अन्यत्र चले गये, राजकुमार भी अपना आत्माको कृतार्थ मानता हुआ घर पर आया। कुमार का सौभाग्यादि गुण करके अपरिग्रहीता परस्त्री बहुत सी मिले

तोभी अपना व्रतमें अतिचार नहीं लगाया और शील खंडन नहीं किया। एक दिन कुमार राज सभामें बैठा हुआ था, उस समय वर्णावर्ण की बात चली, उसमें ऐसा कहवाया कि सब वर्णोंको क्षत्रियवर्ण रक्षा करते हैं, इसलिये क्षत्रिय-वर्ण ही प्रधान है। ऐसा सुनकर जयमालीको जातिमद उत्पन्न हुआ, अनुक्रमसे वहांसे मरकर पहिले देवलोकमें देवपने उत्पन्न हुआ, वहांसे च्यव कर यह तुम्हारा पुत्र हुआ है। इस प्रकार पीछले भवमें चौथा व्रतका अच्छी तरह पालन किया है, जिससे यह सौभाग्य प्राप्त हुआ है और स्वरूपी हुआ है, जिससे यह अपना शील खंडन नहीं करेगा।

इस प्रकार मुनिके मुखसे सुनकर सुरप्रिय कुमारको जातिस्मरण ज्ञान हुआ, जिससे मुनि ने कहा हुआ यथार्थ देखकर पिताको कहने लगा कि हे पिता जी! मुझे आज्ञा दो तो मैं चारित्र अंगीकार करुं; तब यज्ञप्रिय बोला कि हे वत्स!

कुच्छ समय ठहरो, अवसर पाकर श्रीप्रभास-गणधर जी पासमें चारित्र लेवेगें, यह सुनकर धर्मरुचि मुनिके पास यद्यपि यतिधर्मका रागी है तोभी पिताके वचनसे सुरप्रिय कुमार ने श्रावक के व्रत अंगीकार किया । मुनि उपदेश दे कर अन्यत्र विहार कर गये और सुरप्रिय कुमार शुद्ध भावसे श्रावक धर्म पालन कर रहा है ।

एक दिन सुरप्रिय कुमार उद्यान में केलि-गृहमें सो रहा था, इस वक्त एक स्वरूपवंती व्यंतरी वहां आई । वह कुमारका स्वरूप देखकर मोहित हो गई और कुमारिका स्त्री का रूप बना-कर काम विकारके वचनों बोलने लगी। तब कु-मार विचारने लगा कि निश्चय यह मनुष्य की स्त्री नहीं है, जिस्से इसको बिलकुल लज्जा नहीं है और इसकी आंखों भी मीचाती नहीं है। ऐसा विचार कर अपने घर पर चला आया, व्यं-तरी भी निराश हो कर अपना भर्त्तार के पास जा कर कहने लगी कि एक ब्राह्मण ने मेरे आगे विषय भोगकी बहुत प्रार्थना की, मगर धैर्य धा-

रण कर उस दुष्टके पास से भाग आई। ऐसा व्यंतरी का वचन सुनकर व्यंतर क्रोधित होता हुआ, संध्या समय कुमारको मारने आया। यहां कुमार भी अपना आवास गृह पर आकर अपनी स्त्री को पूछने लगा कि आज तूँ उद्यानमें अकेली कैसे आई थी? तब स्त्री कान ढांक कर बोली हे स्वामिन्! यह आप क्या बोलते हैं? कोई भी कुलवंती स्त्री अकेली कंई भी नहीं जावे तो मैं प्रभासजी की स्नुषा हो कर अकेली वनमें कैसे आ सकती हूँ? तो सच्च कहो यह वात पूछनेका क्या कारण है? तब कुमार व्यंतरी की सब बात यथार्थ कह दी। यह बाहिर खड़ा हुआ व्यंतर सुनकर विचारने लगा कि अहो! मेरी स्त्री का दुष्ट चरित्र!!! वह दुःशीलवती है ऐसी स्त्री को धिक्कार हो। ऐसा विचार कर व्यंतर सुरप्रिय कुमारको सब बात कह कर कहने लगा— मैं आपका शीलगुण से प्रसन्न हुआ हूँ तो कुच्छ वरदान मांग लें; तब कुमार बोला कि मैं धर्म पाया हूँ जिससे अन्य किसी का भी प्रयोजन

नहीं, फिर व्यंतर बोला कि देवदर्शन व्यर्थ नहीं जाता, इसलिगे कुच्छ मांग ले, तब कुमार बोला कि मेरा आयुष कितना है ? व्यंतर बोला कि तुम्हारा आयुष बहुत नजीक है, ऐसा कहकर कुमार की वहत स्तुति कर और सुवर्णकी वृष्टिकर व्यंतर अदृश्य हो गया। तब सुरप्रियकुमार अपना आयुष बहुत कम जान कर संथारा किया, एक मासकी संलेषणा कर समाधि पूर्वक मरण पा कर बारहवां अच्युत देवलोकमें देवता हुआ, वहां उत्कृष्टा वाईस सागरोपमका आयुष भोगव कर मनुष्य अवतार पाकर उत्कृष्ट व्रतके प्रभावसे अक्षय शाश्वत स्थानक पावेगा ॥ ऐसा शीलव्रत का माहात्म्य देखकर सुरप्रिय कुमार की जैसे शुद्ध भावसे शील पालना, शील खंडन से अनंगकेतु विद्याधर की सर्व ऋद्धि नाश हुई और प्राणसे भी चला गया और दुर्गतिमें पहूंचा, ऐसा समझ कर शील का खंडन नहीं करना ।

॥ इति सुरप्रियकुमार की कथा ॥

१६ महासतीकी स्तुति ।

ब्राह्मी चन्दनबालिका भगवती राजीमती द्रौपदी,
कौशल्या च मृगावती च सुलसा सीता च भद्रा-
सती। कुन्ती शीलवती नलस्य दयिता चूला
प्रभावत्यपि, पद्मावत्यपि सुंदरी दिनमुखे
कुर्वन्तु वो मङ्गलम् ॥ १ ॥

अर्थ—ब्राह्मीजी, चन्दनबालाजी, राजीमतीजी, द्रौपदीजी, कौशल्याजी, मृगावतीजी, सुलसाजी, सीताजी, भद्रासतीजी, कुन्तीजी, शीलवतीजी, दवयन्तीजी, चूलाजी, प्रभावतीजी, पद्मावतीजी और सुन्दरीजी ये सोलह महासती हैं वे तुम्हारा दिन ऊगे मंगल करें ॥ १ ॥

अन्तिम मङ्गलिक श्लोक

शिवमस्तु सर्वजगतः,

परहितनिरता भवन्तु भूतगणाः ।

दोषाः प्रयान्तु नाशं,

सर्वत्र सुखीभवतु लोकः ।

इति

श्रीशीलरत्नसार संग्रह ग्रन्थ

समाप्तम् ।

शुभं भवतु

ॐ

शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!

सेवं भंते सेवं भंते गौतम बोले सही, श्रीमहावीर के वचनामें कुछ सन्देह नहीं ।

जैसा लिखा हुवा ग्रन्थ, पुस्तक, पानेमे देख्या, बांच्या, तथा सज्जनसे धार्या, सुण्या वैसा ही अल्प बुद्धिके अनुसार लिखा है, तत्व केवली गम्य ।

अक्षर, कानो, मात. अनुस्वार, ह्रस्व, दीर्घ, पद आगो पीछो, ओछो अधिको, जिनवाणी विपरीत अशुद्ध पणे लिख्यो होय तथा कोई तरहकी छपाने में ज्ञानादिक की विराधना कीनी होय, जाणते अजाणते कोई दोष लाग्यो होय तो मन वचन काया करी मिथ्या दुष्कृत देता हुँ ।

शुभं भवतु

इति श्रीशीलरत्नसार संग्रह ग्रन्थ समाप्तम्

श्री अगरचंद भैरोंदान सेठिया जैन ग्रन्थालयमें छपी हुई अमूल्य पुस्तकें—

७ ज्ञान थोकड़ा तीजा भाग २४ ठाणा आदिका थोकड़ा
८ ज्ञान थोकड़ा चौथा भाग सात नय, चार निक्षेपा छव लेश्या का थोकड़ा
१२ श्रावक स्तवन संग्रह भाग २
१३ " " भाग ३
१४ सामायिक तथा नित्यनियम
१५ सुबोध स्तवन संग्रह
१६ पच्चीस बोलका थोकड़ा विस्तार सहित
१७ सामायिक तथा मंगलिक दोहा
१८ आलोयणा संग्रह
१९ ज्ञान बहोत्तरी तथा व्यवहार समकितका ६७ बोल
२० ज्ञानमाला नं० १-२
२१ विविध ढाल संग्रह
२२ आहारका १०६ दोष तथा बावनाचार
२३ लघु दंडकका थोकड़ा
२४ जैन ज्ञान थोकड़ा संग्रह
२५ दशवैकालिक सूत्र मूलपत्राकार हलकी और बढ़ीया कागजमें छप रही हैं।
२६ उत्तराध्ययन सूत्र मूल " "
२७ वीर थुई (सूयगडांग अ० ६) "
२८ नमिराय (उत्तराध्ययन अ० ९) "